मूल्य: ₹30

मार्च–अप्रैल 2025

आई. एस. ओ. 9001: 2015 संगठन

वैज्ञानिक बागवानी की लोकप्रिय पत्रिका

फल फूल

सब्जियों और फूलों का अनोखा गुलदस्ता

राजेश कुमार सिंह, निधि प्रिया और **आकांक्षा सिंह**

रंगीन सब्जियों और फूलों का उपयोग करके एक अनोखा और आकर्षक फूलदान/गुलदस्ता बनाना एक शानदार विचार है। रंग-बिरंगी सब्जियों का उपयोग फूलदान में सजावट के लिए करना सौंदर्य और व्यावहारिकता दोनों दृष्टिकोण से फायदेमंद है। शिमला मिर्च, मूली, गाजर और बैंगनी पत्तागोभी जैसी सब्जियाँ अपने जीवंत रंगों और अनोखे आकार-प्रकार से किसी भी सजावट की सुंदरता बढ़ा देती हैं। ये कृत्रिम सामग्री या प्लास्टिक के फूलों का एक पर्यावरण-अनुकूल विकल्प प्रदान करती हैं और जैविक रूप से नष्ट होने योग्य होती हैं, जिससे यह एक स्थायी विकल्प बनता है। ये सब्जियाँ समृद्धि और पोषण का प्रतीक हैं, जिससे वे त्यौहारों या समारोहों के केंद्र बिंदु के लिए एक आकर्षण जोड़ती हैं। इसके अलावा, इनका अनोखा उपयोग चर्चा का विषय बन जाता है, जो रचनात्मकता और स्थिरता को प्रदर्शित करता है। सब्जियों को ताजे फूलों के साथ संतुलित सजावट के लिए जोड़ा जा सकता है, अकेले न्यूनतम सजावट के लिए उपयोग किया जा सकता है, या उनके रंग और आकार को दिखाने के लिए पारदर्शी फूलदानों में रखा जा सकता है। सजावट के बाद, अधिकांश सब्जियों का उपयोग खाने में भी किया जा सकता है, जिससे व्यर्थता कम होती है। यह दृष्टिकोण सुंदरता, कार्यक्षमता और पर्यावरणीय जागरूकता को एक कलात्मक रचना में जोड़ता है।

रंगीन सब्जियाँ न केवल दृष्टिगत रूप से आकर्षक होती हैं, बल्कि पोषक तत्वों को बढ़ाने और हमें एक बहुत ही स्वस्थ आहार प्रदान करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इनमें एंटीऑक्सीडेंट, फाइटोन्यूट्रिएंट्स, विटामिन और खनिज प्रचुर मात्रा में होते हैं, जो हमें कैंसर और हृदय रोगों के उच्च जोखिम से बचाते हैं।

लाल रंग की सब्जियाँ, जैसे टमाटर, लाइकोपीन से भरपूर होती हैं, जो रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाती हैं और प्रोस्टेट कैंसर से बचाती हैं। नारंगी और पीले रंग की सब्जियाँ, जैसे कद्दू, खरबूजा, गाजर और शकरकंद, बीटा-कैरोटीन से भरपूर होती हैं, जो आँखों और त्वचा के स्वास्थ्य को सुधारने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। नीले और बैंगनी रंग की सब्जियाँ एंथोसाइनिन की उपस्थिति के कारण इस रंग की होती हैं।

सब्जी विज्ञान विभाग, उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, रानी लक्ष्मी बाई केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, झाँसी-284003, उत्तर प्रदेश

रंगीन सब्जियाँ जिन बागानों में उगाई जाती हैं, वे न केवल आकर्षक होती हैं, बल्कि व्यावहारिक, टिकाऊ और मनमोहक भी होती हैं। इनकी सुंदरता और उपयोगिता का संयोजन इन्हें आधुनिक लैंडस्केपिंग के लिए एक बेहतरीन विकल्प बनाता है।

रंगीन सब्जियाँ अपने जीवंत रंगों, विशिष्ट पत्तियों और मनमोहक फूलों से बगीचों की दृश्य सुंदरता में इजाफा करती हैं। स्विस चार्ड, जिसके डंठल लाल, पीले और गुलाबी रंग के होते हैं, बैंगनी गोभी और इंद्रधनुषी गाजर जैसी सब्जियाँ शानदार रंग जोड़ती हैं, जबकि केल के बनावटयुक्त पत्ते और विविधतापूर्ण लेट्यूस आकर्षक पौधों की तरह दिखते हैं। कई सब्जियाँ ऐसे फूल विकसित करती हैं जो पारंपरिक फूलों जैसे दिखते हैं, जैसे तोरई के बड़े पीले फूल, भिंडी के हिबिस्कस जैसे फूल और रनर बीन्स के चमकीले लाल या सफेद फूल। ये विशेषताएँ रंगीन सब्जियों को उपयोगी और सुंदर बगीचों के विकास के लिए आदर्श बनाती हैं।

इसे फूलदान में अन्य रंग-बिरंगे फूलों के साथ मिलाकर रखा जा सकता है, जैसे लाल, सफेद या पीले फूल, जो इसके साथ शानदार तालमेल बनाए रखते हैं। इसके अलावा, इसे अन्य सब्जियों जैसे ब्रोकली, शिमला मिर्च या गाजर के साथ संयोजित कर सकते हैं ताकि रंगों और बनावट का अच्छा संतुलन बने। यह सजावट किसी भी विशेष अवसर या साधारण घर की सजावट के लिए एक अद्वितीय और आकर्षक हो सकती है।

आकर्षण से भरपूर

अनोखी बनावट और जीवंत पत्तियों वाली सब्जियाँ, जैसे केल, जिसके पत्ते हरे, बैंगनी या मिश्रित रंगों में घुंघराले या लहरदार होते हैं, और रेड-लीफ या ओकलीफ जैसी लेट्यूस किस्में, जो अपने आकर्षक स्वरूप और रंगों के साथ सजावटी पौधों के समान आकर्षण प्रदान करती हैं, किसी भी बगीचे में एक मनमोहक जोड़ बनती हैं। फूलों की विभिन्न किस्मों के साथ संगत पौध-रोपण (कम्पैनियन प्लांटिंग) सब्जियों की वृद्धि को बढ़ा सकता है, कीटों को दूर रख सकता है, परागणकों को आकर्षित कर सकता है और दृश्य रूप से मनमोहक लैंडस्केप बना सकता है। रोमानेस्को फूलगोभी को फूलदान में सजाने के लिए एक अनोखा और आकर्षक विकल्प हो सकता है। इसकी हरी रंगत और विशिष्ट रूपाकार इसे अन्य फूलों और सब्जियों से अलग बनाता है। रोमानेस्को फूलगोभी की हेलिक्स (सर्पिल) जैसी संरचना और तीव्र हरे रंग के कारण यह फूलदान में एक सशक्त दृश्य प्रभाव पैदा करती है।

जब रंगीन सब्जियों को फूलों जैसे नैस्टरशियम, गेंदे, जीनिया, कॉसमॉस, सूरजमुखी, एल्युसम, लैवेंडर, कैलेंडुला आदि के साथ लगाया जाता है, तो यह बगीचों को रंगीन और आकर्षक बनाता है। जब सब्जियाँ फूलों के साथ उगाई जाती हैं, तो उनके बीच पर्याप्त जगह छोड़ी जानी चाहिए ताकि पोषक तत्वों, धूप और पानी के लिए प्रतिस्पर्धा न हो और हर पौधा अच्छी तरह से पनपे। संगत पौध-रोपण महत्वपूर्ण है, इसलिए ऐसे फूलों का चयन करें जो पूरक लाभ प्रदान करते हों, जैसे कीट-रोधी गुण या परागणकों को आकर्षित करने की क्षमता, जो सब्जियों के विकास में मदद कर सके। रंग सामंजस्य (कलर हार्मनी) को ध्यान में रखते हुए, फूलों के रंगों को सब्जियों की पत्तियों के साथ संयोजित करके एक एकीकृत और आकर्षक रूप दिया जा सकता है। ■

फल फूल

वैज्ञानिक बागवानी की लोकप्रिय द्विमासिकी
वर्षः 46, अंकः 2, मार्च-अप्रैल 2025

संपादन सलाहकार समिति

1. **डॉ. एस के सिंह** — **अध्यक्ष**
   उपमहानिदेशक (बागवानी)
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
2. **डॉ. अनुराधा अग्रवाल** — **सदस्य**
   परियोजना निदेशक (डीकेएमए)
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
3. **डॉ. टी दामोदरन** — **सदस्य**
   निदेशक
   भाकृअनुप-केंद्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ
4. **डॉ. जगदीश राणे** — **सदस्य**
   निदेशक
   भाकृअनुप-केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर, राजस्थान
5. **डॉ. मारकंडे सिंह** — **सदस्य**
   विभागाध्यक्ष
   पुष्प विज्ञान विभाग, भाकृअनुप-भाकृअनुसं, नई दिल्ली
6. **प्रो. राजेश्वर सिंह चंदेल** — **सदस्य**
   कुलपति
   डॉ. वाई एस परमार बागवानी एवं वानिकी विश्वविद्यालय नौनी, हिमाचल प्रदेश
7. **श्री शरद पांडे** — **सदस्य**
   कृषि पत्रकार
8. **श्री कंवल सिंह चौहान** — **सदस्य**
   प्रगतिशील किसान
9. **सुश्री सुनीता अरोड़ा** — **सदस्य सचिव**
   प्रभारी, हिंदी संपादकीय एकक (डीकेएमए)
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

संपादक
सुनीता अरोड़ा

प्रभारी (उत्पादन एकक)
पुनीत भसीन

प्रभारी (व्यवसाय एकक)
भूपेन्द्र दत्त
दूरभाषः 011-25843657
E-mail: bmicar@icar.org.in
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन, पूसा गेट, नई दिल्ली-12
एक प्रतिः रु. 30.00   वार्षिक : रु. 150.00
विशेषांक : रु. 100.00

E-mail : phalphul@gmail.com

आवरण चित्र : डा. राजेश कुमार सिंह

डिस्क्लेमर
लेखों में व्यक्त विचारों, जानकारियों, आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं। उनसे भाकृअनुप की सहमति आवश्यक नहीं है। पत्रिका में प्रकाशित लेखों तथा अन्य सामग्री का कॉपीराइट अधिकार भाकृअनुप-डीकेएमए के पास सुरक्षित है। इन्हें पुनः प्रकाशित करने के लिए प्रकाशक की अनुमति अनिवार्य है। रसायनों-कीटनाशकों की डोज संबंधित संस्तुतियों का प्रयोग विशेषज्ञों से परामर्श के बाद करें। समस्त विवादों के लिए न्याय क्षेत्र दिल्ली होगा।

विषय सूची

भारत का बढ़ता सब्जी उत्पादन-**अनुराधा अग्रवाल**

किस्में — 4
मैदानी क्षेत्रों में सेब की उन्नत बागवानी
पुष्पेन्द्र प्रताप सिंह, दुष्यंत मिश्र **और** सुनील कुमार

बहुमूल्य — 6
औषधीय गुणों से भरपूर काले जीरे का उत्पादन
दुर्गा प्रसाद भंडारी, इंद्र देव, अशोक कुमार ठाकुर **और** अरुण नेगी

पोषण — 10
सब्जियों में बढ़ाएं पोषक तत्वों की मात्रा
हरजोत सिंह सोही, संदीप कुमार **और** पी.एस. तंवर

मेवा — 12
स्वादिष्ट मैकाडामिया नट्स का उत्पादन
प्रकाश चंद्र त्रिपाठी, अनुराधा साने, कनुप्रिया **और** प्रीति सिंह

तकनीक — 15
सब्जी पौधशाला का उन्नत प्रबंधन
राहुल देव, निर्मल हेडाऊ, अमित पश्चापुर, रेनू सनवाल **और** लक्ष्मी कान्त

आधी दुनिया — 17
खाद्य प्रसंस्करण द्वारा महिलाओं का सशक्तिकरण
रीतू सिंह **और** डी. के. राणा

गुणकारी — 19
भंगजीरा का औषधीय महत्व
विपिन सती **और** दुर्गेश पन्त

उपयोगी — 21
औषधीय गुणों से भरपूर बेल
देवेन्द्र पाण्डेय, संजय कुमार सिंह, शिव पूजन, शारदुल्य शुक्ला **और** आश्चर्य पाण्डेय

उपाय — 24
लीची में फुटाव का समाधान
सुनील कुमार, बिकास दास, अशोक धाकड़ **और** गणेश कुमार

संरक्षण — 26
सुषुप्त कलियों का हिम परिरक्षण
रविश चौधरी **और** एस. के. मलिक

विधि — 28
कीवी फल की वैज्ञानिक खेती
श्याम सुन्दर, दीपा हंसराज द्विवेदी, हरीश कुमार मौर्य, सौरभ वर्मा **और** बिपिन कुमार

विषय सूची

नकदी फसल 31
बुंदेलखंड में स्ट्रॉबेरी उत्पादन
ज्योत्स्नारानी प्रधान, हेमलता सिंह, ललिता राणा **और** आशुतोष कुमार

34
प्रणाली
सब्जी मटर की सफल खेती
विनय कुमार, प्रतीक सिंह, आनंद कुमार सिंह, राम कुमार **और** पूनम मौर्या

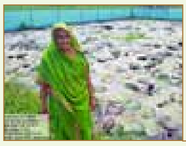
अवसर 36
मखाना उत्पादन से संभावनाएं
ज्ञान चंद्र, परमानंद प्रभाकर **और** रवि शंकर कुमार

यांत्रिकी 39
बेर एवं छिद्रक यंत्र के लाभ
कोमटिनेनी भरत कुमार, उत्कर्ष द्विवेदी, सांवल सिंह मीना **और** मन मोहन देव

नियंत्रण 41
मिर्च में ब्लैक थ्रिप्स का समन्वित कीट प्रबंधन
अजीत प्रताप सिंह, संजय कुमार सिंह **और** कुलदीप श्रीवास्तव

प्रबंधन 45
संतरे में लोरैंथस परजीवी खरपतवार
नताशा गुरुंग, साजिद अली, सुजीत सरकार, बिजॉय सिंह **और** चंदन कुमार

जानकारी 47
मार्च-अप्रैल के मुख्य बागवानी कार्य
हरे कृष्ण, अरविंद कुमार सिंह, नृपेन्द्र विक्रम सिंह, कुलदीप श्रीवास्तव **और** शुभम कुमार तिवारी

आवरण-II
रचनात्मक
सब्जियों और फूलों का अनोखा गुलदस्ता
राजेश कुमार सिंह, निधि प्रिया **और** आकांक्षा सिंह

आवरण-III
सफलता गाथा
ड्रैगन फ्रूट की खेती से समृद्धि
नवल किशोर गुप्ता

निदेशक की कलम से

भारत का बढ़ता सब्जी उत्पादन

सब्जी उत्पादन में भारत का विश्व में दूसरा स्थान है। भारत में सब्जियों में प्याज, अदरक और भिंडी का सबसे ज्यादा उत्पादन होता है। आलू, फूलगोभी, बैंगन और गोभी के उत्पादन में भारत दूसरे स्थान पर है। देश में सब्जी की खेती 2.8 प्रतिशत भूमि पर होती है।

भारत के सब्जी निर्यात में भी तेजी से वृद्धि हो रही है। यह कृषि जलवायु विविधता और कुशल कृषि कार्य बल पर केंद्रित है। हमारा देश सब्जी निर्यात में वैश्विक स्तर पर 13वें स्थान पर है। देश का बढ़ता हुआ सब्जी निर्यात क्षेत्र विकास और अवसर की आकर्षक कहानी बताता है। सरकारी आंकड़ों के अनुसार भारत में सब्जियों का उत्पादन इस वर्ष बढ़ने की उम्मीद जताई गई है। वर्ष 2023-24 में यह उत्पादन 2072.08 लाख टन था, वहीं 2024-25 में इसके 2145.63 लाख टन तक पहुंचने की संभावना है। इसमें प्याज, आलू, टमाटर, हरी मिर्च, फूलगोभी और मटर उत्पादन में बढ़ोतरी की उम्मीद है।

प्याज के उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि हो सकती है। पिछले वर्ष इसका उत्पादन 242.67 लाख टन था, जो 2024-25 में बढ़कर 288.77 लाख टन तक पहुंच सकता है, यानी इसमें 46.10 लाख टन वृद्धि की संभावना है।

आलू उत्पादन में बढ़ोतरी दर्ज की जा सकती है। वर्ष 2023-24 में जहां इसका उत्पादन 595.72 लाख टन रहा, वहीं 2024-25 में यह 25.19 लाख टन अधिक होकर नया स्तर छू सकता है।

टमाटर की पैदावार में मामूली वृद्धि का अनुमान है। वर्ष 2023-24 में यह 213.23 लाख टन था, जबकि 2024-25 में यह बढ़कर 215.49 लाख टन तक पहुंच सकता है, जो 1.06 प्रतिशत अधिक होगा।

बागवानी फसलों का उत्पादन भी इस वर्ष बढ़ने का अनुमान है। वर्ष 2023-24 में यह 176.66 लाख टन था, जबकि 2024-25 में इसके 179.37 लाख टन तक पहुंचने की संभावना है यानी इसमें 1.53 प्रतिशत की बढ़ोतरी हो सकती है।

मसालों का उत्पादन पिछले वर्ष की तुलना में थोड़ा घट सकता है। वर्ष 2023-24 में यह 124.84 लाख टन था, जबकि 2024-25 में 119.96 लाख टन रहने का अनुमान है। हालांकि, इसमें लहसुन और हल्दी जैसी फसलों के उत्पादन में वृद्धि देखने को मिल सकती है।

भारत में ही नहीं बल्कि दुनियाभर में सब्जियों की मांग बढ़ रही है। सब्जी बाजार का आकार 8.27 प्रतिशत की दर से बढ़ रहा है और 2029 तक यह 161.60 बिलियन अमेरीकी डॉलर तक पहुंच जायेगा। भारत का सब्जी निर्यात 2023-24 में 2.1 बिलियन अमेरीकी डॉलर तक पहुंच गया जो भारत में 2022-23 के सब्जी निर्यात की तुलना में 20 प्रतिशत अधिक है। भारत से निर्यात की जाने वाली मुख्य 10 सब्जियां हैं - प्याज, टमाटर, गोभी, आलू, सेम, लहसुन, पालक, फूलगोभी, भिंडी और ककड़ी। भारतीय सब्जियों के प्रमुख निर्यातक देश बांग्लादेश, संयुक्त राज्य अमीरात, मलेशिया, संयुक्त राज्य अमेरीका और श्रीलंका हैं।

भारत को सब्जी फसल उत्पादन में प्रथम स्थान पर लाने के लिए आधुनिक सब्जी की खेती को प्रोत्साहित किया जा रहा है। सब्जी की खेती की तकनीक को उन्नत बनाने के लिए कृषि वैज्ञानिक लगातार कार्यशील हैं। इस वर्ष बागवानी फसलों में 75 फसलों की 189 किस्में जारी की गई। ये फसलें उच्च उपज देने वाली, जलवायु अनुकूल और जैव सशक्त हैं। बागवानी फसलों में सब्जियों, रोपण फसलों, कंदीय फसलों और मसालों की विभिन्न किस्में जारी की गई।

अनुराधा

(अनुराधा अग्रवाल)

मैदानी क्षेत्रों में सेब की उन्नत बागवानी

पुष्पेन्द्र प्रताप सिंह[1], **दुष्यंत मिश्र**[2] और **सुनील कुमार**[3]

मैदानी क्षेत्रों में सेब की बागवानी हेतु विदेशी शोध संस्थानों द्वारा कुछ प्रजातियां विकसित की गई। इनका भारत की उपोष्ण जलवायु में परीक्षण या मूल्यांकन नहीं होने के कारण इसके बारे में जागरुकता अभी तक नहीं थी। भारतीय कृषि प्रणाली अनुसंधान संस्थान ने सेब की फसल को मैदानी क्षेत्रों में लोकप्रिय बनाने हेतु संस्थान प्रक्षेत्र में मूल्यांकन किया। इसके अर्न्तगत सेब की कम शीतलन आवश्यकता वाली प्रजातियों, जिनकी पुष्पण हेतु शीतलन इकाइयों की आवश्यकता केवल 250-300 घंटों की होती है, का परीक्षण एवं मूल्यांकन उपोष्ण जलवायु में किया गया। उक्त अध्ययन से प्राप्त परिणामों में यह भ्रांति टूट गई कि सेब की बागवानी उपोष्ण जलवायुवीय क्षेत्रों में की जाए तो सफलता प्राप्त होती है। यह अध्ययन उपोष्ण क्षेत्रों में कृषि एवं बागवानी में विविधीकरण के नए विकल्प को दर्शाता है।

मैदानी एवं गर्म क्षेत्रों में बागवानी हेतु सेब की कई प्रजातियों का प्रचार-प्रसार एवं क्षेत्र विस्तार नहीं हो सका। इन प्रजातियों के मैदानी क्षेत्रों में प्रक्षेत्र मूल्याकंन के आंकड़े की अनुपलब्धता थी।

कम शीतलन की आवश्यकता वाली प्रजातियों के नाम इस प्रकार हैं- अन्ना, डॉर्सेट गोल्डन, एचआर एमएन-99, इन शेमर, माइकल, वेबर्ली हिल्स, पार्लिन्स ब्यूटी, ट्रापिकल ब्यूटी, पेटेगिल, तम्मा आदि। संस्थान में अन्ना, डॉर्सेट गोल्डन एवं माइकल प्रजाति के पौधे को लगाया गया है। इन पर हुए 4 वर्षो के अध्ययन से प्राप्त अनुभव को यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

अन्ना:- यह सेब की दोहरी उद्देश्य वाली प्रजाति है जो गर्म जलवायु में अच्छी तरह से विकसित होती है तथा बहुत जल्दी पककर तैयार होती है। पर्वतीय क्षेत्रों में होने वाली सेब की प्रजातियों को पुष्पण एवं फलन हेतु कम से कम 450-500 घंटों की शीतलन इकाइयों की आवश्यकता होती है। इस प्रजाति के फल जून माह में परिपक्व हो जाते हैं। फलों की परिपक्वता पर रंग का विकास पीली सतह पर लाल आभा के साथ होता है।

फल देखने में गोल्डन डिलीशियस जैसे लगते हैं। यह शीघ्र एवं अधिक फलन वाली किस्म है। जून माह में सामान्य तापमान पर लगभग 7 दिनों तक इनका भण्डारण किया जा सकता है। वर्गीकरण के अनुसार अन्ना सेब एक स्वयं बंध्य (सेल्फ स्टेराइल) प्रजाति है। अध्ययन के तृतीय वर्ष के दौरान परागणदाता किस्म डॉर्सेट गोल्डन के पौधे के

डॉर्सेट गोल्डन

डॉर्सेट गोल्डन सेब की गोल्डन डिलीशियस जैसी प्रजाति है। यह गर्म क्षेत्रों के लिए विकसित की गई है, जहां शीत ऋतु में 250-300 घन्टों की शीतलन की इकाइयां मिल सके। अन्ना किस्म की सफल बागवानी में यदि उचित दूरियों पर 20 प्रतिशत पौधे डॉर्सेट गोल्डन प्रजाति के लगाए जायें जिससे पूरे बाग में उनके द्वारा उत्पन्न परागकण उपलब्ध हो सकें तो अच्छे परिणाम मिलते हैं। संस्थान में अध्ययन हेतु माइकल के पौधे भी लगाये गये हैं किन्तु उनसे अभी तक कोई आशाजनक परिणाम नहीं मिले हैं।

[1]प्रधान वैज्ञानिक; [3]निदेशक, भाकृअनुप-भारतीय कृषि प्रणाली अनुसंधान संस्थान, मोदीपुरम, मेरठ; [2]प्रधान वैज्ञानिक, भाकृअनुप-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, रहमान खेड़ा, लखनऊ।

डॉसेर्ट गोल्डन सेब

सारणी: प्रति हैक्टर उत्पादन पर खर्च	
क्रियाएं	**लागत (रु.)**
पौधे की खरीद	60,000/-
खेत की तैयारी	48,000/-
गड्ढे की तैयारी एवं रखरखाव	18,576/-
देसी खाद	24,200/-
उर्वरक	10,400/-
रासायनिक	15,400/-
इन्टर कल्चर ऑपरेशन	28,800/-
श्रम	34,600/-
सिंचाई	22,500/-
देखरेख में खर्च	15,800/-
फसल तुड़ाई	22,000/-
कुल खर्च	3,00,276/-

पुष्पण के कारण अन्ना के वृक्षों पर फलन अधिक पाया गया। इसका तात्पर्य यह है कि अन्ना सेब की बागवानी करते समय परागण दाता प्रजाति का प्रावधान करना आवश्यक रहता है।

पौध रोपण: सर्वप्रथम सरकारी पौधशाला या राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड द्वारा मान्यता प्राप्त पौधशाला से पौधों का अग्रिम आरक्षण करवा लेना चाहिये। बागवानी करने वाले किसानों को यह सलाह दी जाती है कि सेब के वृक्षों के लिए पी.एच. मान 6-7 आदर्श है। मृदा में जलजमाव नहीं होना चाहिए और उचित जल निकास वाली मिट्टी खेती के लिए सबसे उपयुक्त होती है। इन्हें सूर्य के प्रकाश की कम से कम 6 घंटे की आवश्यकता होती है। प्रति पौधा 15 किलोग्राम सड़ी गोबर की खाद का इस्तेमाल करें। सेब की प्रजातियों की चयनित प्रजातियों को वर्गाकार 5×5 या 6×6 मीटर की दूरी पर लगाना चाहिए। पौध रोपण के समय यह ध्यान रखना अति आवश्यक है कि मूलवृंत एवं सांकुर के जोड़ का स्थान एक गांठ के रूप में आसानी से दिखाई देता है कभी भी भूमि में दबना नहीं चाहिए।

पादप वृद्धि, पुष्पण एवं फलन: नवम्बर से जनवरी तक पौधों की लगभग 60 प्रतिशत पत्तियां गिर जाती हैं। पत्तियों के गिरने पर किसान को चिंता नहीं करनी चाहिए। यह इन पौधों को शीत ऋतु के समय न्यूनतम तापमान को सहने एवं अगले मौसम में पुष्पण लाने हेतु एक स्वाभाविक प्रक्रिया है।

कीट एवं व्याधियां: हानिकारक कीटों में मुख्य रूप से अगस्त-सितम्बर में हेयर कैटर पिलर का प्रकोप होता है इसके बचाव हेतु डाइमेथोएट 2 मिली 1 लीटर पानी की दर से तुरन्त देना चाहिए। जुलाई के समय बरसात के साथ कुछ फलों में सड़न की समस्या दिखाई पड़ती है। इसके उपचार हेतु किसी भी सुरक्षित फफूंदीनाशक कार्बेण्डाजिम या थियोफेनेट मिथाइल का 0.1 प्रतिशत की दर से छिड़काव किया जा सकता है। बेहतर तो यही होता है, कि बरसात के पूर्व ही फलों को तोड़ लिया जाए।

उपज: उन्नत विधि द्वारा स्ट्रॉबेरी उत्पादन में प्रति हैक्टर 120 क्विंटल उपज प्राप्त हो जाती है। इसका बाजार भाव यदि 50 रुपये कि.ग्रा. है तो 600,000 रुपये की आय प्राप्त होगी। इस आय में से कुल लागत (3,00,276 रुपये) को निकाल दिया जाए तो शुद्ध लाभ 2,99,724 प्राप्त होगा। ■

भाकृअनुप की मासिक लोकप्रिय पत्रिका
'खेती' अप्रैल, 2025 अंक के प्रमुख आकर्षण

- शुष्क गाय का प्रबंधन
- श्रीअन्न हैं पोषक तत्वों से भरपूर
- अर्ध-शहरी खेती के लाभ
- करमुला कीट का प्रभावी प्रबंधन
- नवजात पशुओं की देखभाल
- जम्मू और कश्मीर में प्राकृतिक खेती का विकास
- झींगापालन के प्रमुख रोगों का नियंत्रण
- लवणीय-क्षारीय मृदा में लीचिंग एवं जिप्सम का महत्व
- पशुधन पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव
- किसानों के लिए प्राथमिक चिकित्सा का महत्व
- कृषि में ड्रोन की भूमिका
- मृदा अपरदन के कारक एवं निवारण
- कृषि में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस की संभावनाएं
- डेरी फार्म की उत्पादन क्षमता में वृद्धि
- तिल की प्राकृतिक खेती

संपर्क सूत्र: प्रभारी, व्यवसाय एकक, भाकृअनुप-कृषि ज्ञान प्रबंधन निदेशालय, कैब-1, पूसा गेट, नई दिल्ली-110012
दूरभाष: 25843657, www.icar.org.in

औषधीय गुणों से भरपूर काले जीरे का उत्पादन

दुर्गा प्रसाद भंडारी[1], **इंद्र देव**[2], **अशोक कुमार ठाकुर**[2] और **अरुण नेगी**[3]

काला जीरा (*बूनियम पर्सिकम बायोस*) एक उच्च मूल्य वाला हर्बेसियस मसाला है, जिसका व्यापक रूप से पाक, फूल, इत्र और कार्मिनेटिव उद्देश्यों के लिए उपयोग किया जाता है। यह अपने औषधीय महत्व के लिए दुनियाभर में जाना जाता है और विभिन्न नामों से जाना जाता है। हिमाचली काला जीरा या किन्नौरी काला जीरा चिकित्सा और मसाले के लिए उपयोग किया जाता है तथा यह एक छोटा घास और बारहमासी पौधा है। इसकी खेती बड़े पैमाने पर नकदी फसल के रूप में की जाती है। स्वाद में हल्की सी कड़वाहट वाला काला जीरा मसालों के तौर पर उपयोग किया जाता है। तासीर में गर्म होने के कारण सर्दियों में इसका इस्तेमाल अधिक और फायदेमंद होता है। इसे खाने में इस्तेमाल करने के अतिरिक्त औषधि की तरह भी इस्तेमाल किया जाता है। आम जीरे की तुलना में इसकी महक अधिक होती है। इसका उपयोग नमकीन चाय में मसाले के तौर पर भी किया जाता है। जीरे की कई किस्में होती हैं जैसे मोटा जीरा, भूरा जीरा, हल्का सफेद जीरा, लेकिन सबसे उच्चतम गुणवत्ता माको जीरा की होती है, जिसे काला जीरा भी कहा जाता है। माको जीरे के दाने अन्य किस्मों से पतले या बारीक और काले होते हैं तथा अन्य किस्मों से इसकी सुगंध भी अधिक होती है। माको जीरा देश के गिने-चुने हिस्सों में ही पाया जाता है और यही वजह है कि यह अन्य जीरे की किस्मों से महंगा होता है।

काले जीरे की खेती और वितरण पूरे भारत में विशेष रूप से पंजाब, हिमाचल प्रदेश, गंगा के मैदानी क्षेत्र, बिहार, बंगाल, असोम और महाराष्ट्र में की जाती है। भारत के अतिरिक्त यह प्रजाति सीरिया, लेबनान, इजराइल और दक्षिण यूरोप के साथ-साथ बांग्लादेश, तुर्की, मध्य-पूर्व और भूमध्य सागरीय बेसिन में भी उगाई जाती है।

[1]वैज्ञानिक; [2]सह-निदेशक और प्रमुख; [3]निदेशक, प्रसार शिक्षा, डॉ यशवंत सिंह परमार औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौणी-सोलन-173220 हिमाचल प्रदेश

जम्मू-कश्मीर में काला जीरा गुरेज, माचिल, तंगदार, पुलवामा, पद्दार, करनाह, बडगाम और श्रीनगर के करेवास जैसी पहाड़ियों तक ही सीमित है। आमतौर पर फसल बिखरे हुए इलाकों में प्राकृतिक रूप से बढ़ती है, इसलिए कैरावे (कैरम कैरावे) के मामले में 350-400 किलोग्राम/हैक्टर की तुलना में जम्मू-कश्मीर में पैदावार 129 किलोग्राम/हैक्टर और हिमाचल प्रदेश में 179 किलोग्राम/हैक्टर पाई गई है। कम उत्पादकता मुख्य रूप से खराब फसल प्रबंधन प्रथाओं, अपर्याप्त रोपण घनत्व, उच्च खरपतवार, रोग, कीटनाशक और पोषण

काला जीरा के फूल

प्रसंस्करण तकनीकों की कमी के कारण है। इसके अतिरिक्त बीजों के निरंतर संग्रह के कारण, अत्यधिक वनस्पति कटाव ने इसके पारिस्थितिक प्रकारों पर अतिक्रमण किया है और फसल एक लुप्तप्राय प्रजाति बन गई है।

काला जीरा की उत्पत्ति का केंद्र पाकिस्तान के हिंदू-कुश क्षेत्र अफगानिस्तान और हिमालय के उत्तर-पश्चिमी वन क्षेत्रों में पाया जाता है। काला जीरा किन्नौर, कुल्लू, चंबा, शिमला, सिरमौर, लाहौल-स्पीति, पांगी और भरमौर के उच्च पर्वतीय क्षेत्रों में 1850-3100 मीटर की ऊंचाई पर प्राकृतिक रूप से उगता है। हिमाचल के लाहौल स्पीति जिले में भी कुछ किसान इसकी खेती कर रहे हैं। काला जीरा किन्नौर के शौंग और बुरुआ गांव में सेब के नीचे उगाया जा रहा है। इस क्षेत्रों में यह अत्यधिक लोकप्रिय नकदी फसल है, जिसे लगभग दो साल तक फसल की देखभाल करनी पड़ती है। इसकी खेती से प्रति इकाई क्षेत्र में उच्च आय प्राप्त होती है, इसलिए यह किसानों द्वारा खेती के लिए अत्यधिक उपयुक्त है।

किन्नौरी काला जीरा

काला जीरा कभी जंगलों में उगता था, किंतु आज किसान खेतों में उगा रहे हैं। किन्नौर के कुछ गांवों में काला जीरा किसानों की आर्थिकी मजबूत करने में संजीवनी का काम कर रहा है। हिमाचली काला जीरा एक कृषि उत्पाद है, जिसका जीआई टैग (432) के लिए आवेदन भौगोलिक संकेत (पंजीकरण और संरक्षण) अधिनियम, 1999 के तहत 4 मार्च, 2019 को पंजीकृत किया गया था। इसे काला जीरा उत्पादक संघ द्वारा 17 जुलाई, 2017 को पंजीकृत किया गया। काला जीरा आर्थिक रूप से सबसे महत्वपूर्ण औषधीय पौधे और मसालों में से एक है जो बड़े पैमाने पर हिमाचल प्रदेश में उगाया जाता है। काला जीरा किन्नौर के वन क्षेत्रों में प्राकृतिक रूप से भी उगता है और किसान परिपक्व होने पर बीज को इकट्ठा करते हैं और इसे बेचते हैं। किन्नौर जिले के शौंग गांव में काला जीरा की खेती बड़े पैमाने पर नकदी फसल के रूप में की जा रही है। इस बेशकीमती मसाले की मांग बहुत अधिक है, क्योंकि फसल कटाई के एक महीने बाद भी काला जीरा मिलना मुश्किल होता है। वर्तमान में, किन्नौर जिले में काला जीरा की कीमत जुलाई-अगस्त के महीने में लगभग 1500 रुपये प्रति किलोग्राम तक होती है, लेकिन इसे दिल्ली के बाजार में 3000 से 5000 रुपये प्रति किलोग्राम की कीमत पर बेचा जा रहा है। बौद्धिक संपदा अधिकार के तहत किन्नौरी काला जीरा को संरक्षण करके इसकी रक्षा करना, काला जीरा को खेती में शामिल करना किसानों के लिए बेहद फायदा प्रदान कर सकता है। किन्नौर जिले के शौंग गांव के किसानों ने काला जीरा की खेती के लिए वर्ष 2021-22 के लिए प्रतिष्ठित 'प्लांट जीनोम सेवियर कम्युनिटी अवार्ड' जीता है। शौंग गांव में कुल 51 हैक्टर भूमि में काला जीरा उगाया जा रहा है।

उत्पादन

हिमाचल के शुष्क समशीतोष्ण क्षेत्रों में काला जीरा प्राकृतिक रूप से उगता है, हालांकि प्राकृतिक रूप से उगने वाले किन्नौरी काला जीरा के पौधे को पर्वतीय कृषि अनुसंधान एवं विस्तार केंद्र, सांगला, जिला किन्नौर द्वारा खेती में शामिल किया गया है। इसके अतिरिक्त इसकी खेती और अन्य उत्पादन विधियों के लिए कृषि-तकनीक विकसित की गई है। किन्नौर के कुछ क्षेत्रों से सीमित संख्या में भूमि-प्रजातियाँ एकत्र की गई हैं और सांगला में खेत पर उनका रखरखाव किया जा रहा है एवं सेब के बगीचों के नीचे खेती की जा रही है।

काला जीरा को शुरू में बीजों के माध्यम से प्रचारित किया जाता है, लेकिन इसके बाद की वृद्धि और उत्पादन कंदों द्वारा बनाए रखा जाता है, जो अंकुरित अंकुरों द्वारा मिट्टी में 10-15 सें.मी. गहराई में बनते हैं। इसे बीजों के माध्यम से उगाते हुए नए बीज पैदा करने में चार साल का समय लगता है। बीजों को अंकुरण के लिए शीतलन की आवश्यकता होती है और अक्टूबर-नवंबर के दौरान बोए गए बीज मार्च के महीने में बर्फ पिघलने के बाद अंकुरित होते हैं। अप्रैल-मई के महीने में बोल्टिंग होती है और फूल आते हैं।

सेब वृक्षों के नीचे काले जीरे की खेती

फसल, फूल आने के 45-60 दिनों के अंदर पक जाती है। पहले वर्ष में दो से तीन पत्तियाँ निकलकर सूख जाती हैं। पहले वर्ष के दौरान बहुत छोटा कंद विकसित होता है और यह अगले वर्ष के लिए प्रवर्धन के रूप में कार्य करता है। दूसरे वर्ष में यह छोटा कंद अंकुरित होता है और बहुत छोटा पौधा पैदा करता है तथा फिर बिना किसी फूल या बीज के सूख जाता है। तीसरे वर्ष में मटर के बीज के आकार का छोटा कंद अंकुरित होता है और पौधे एवं शाखाएँ उत्पादित करता है, लेकिन फूल नहीं आते हैं। चौथे वर्ष में पूर्ण विकसित कंद अप्रैल-मई के महीने में अंकुरित होते हैं।

कंद के आकार और स्वास्थ्य के आधार पर प्रत्येक वर्ष टिलर की संख्या बढ़ती है। 15-20 ग्राम के कंद से अधिकतम 7-8 की संख्या में टिलर उत्पन्न होते है। पौधे हर साल उन्हीं कंदों से पुनर्जीवित होते हैं और 5-6 वर्षों में अपने अधिकतम आकार लगभग 20-22 ग्राम तक पहुंच जाते हैं। इस आकार के कंद से अधिक शाखाएँ निकलती हैं जिससे अधिक उपज होती है। काला जीरा को कंदों के माध्यम से भी उगाया जा सकता है, जिसे नवंबर के महीने में लगाया जा सकता है और दिसंबर के अंत तक अंकुरण शुरू हो जाता

है। लेकिन मार्च माह में बर्फ पिघलने तक यह भूमिगत ही रहता है।

जलवायु: हल्के बर्फबारी वाले ठन्डे शुष्क क्षेत्रों से लेकर गर्म-आर्द्र क्षेत्रों में काला जीरा अच्छी तरह से बढ़ता है। ठंडा और आर्द्र मौसम फूल आने और बीज बुआई के लिए अनुकूल होता है।

मिट्टी: माइक्रोबियल गतिविधि में समृद्ध रेतीली, दोमट मिट्टी खेती के लिए सबसे उपयुक्त होती है। भारी वर्षा वाले क्षेत्रों की मैली मिट्टी और मध्यम वर्षा वाले क्षेत्रों की समतल एवं अच्छी जल निकासी वाली मिट्टी खेती के लिए काफी उपयुक्त होती है। मिट्टी का पीएच 7.0 से 7.5 खेती के लिए अनुकूल होता है।

बुआई: जीरे की बुआई 1 नवम्बर से लेकर 25 नवम्बर के बीच करनी चाहिए। 5-7 किलोग्राम बीज की दर प्रति हैक्टर के लिए पर्याप्त होती है। बीज बुआई से पहले फफूंदनाशक जैसे 2 ग्राम मैंकोजेब प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित किया जाता है या ट्राईकोडर्मा 4 से 6 ग्राम प्रति किलोग्राम का उपयोग करते हैं। यदि कन्द उपलब्ध हों तो लगभग 1.50-1.75 लाख कन्द एक हैक्टर भूमि में रोपने के लिए काफी होते हैं। यह छिटकवां विधि और पंक्ति बुआई से भी बोया जाता है।

जीरे की खेती के लिए जीवांशयुक्त हल्की एवं दोमट उपजाऊ भूमि अच्छी होती है। भूमि में जल निकास की उपयुक्त व्यवस्था आवश्यक होती है। भारी, लवणीय एवं क्षारीय भूमि इसकी खेती के लिए बाधक मानी जाती है। जीरे की खेती के लिए पहली जुताई के समय हल या कल्टीवेटर से मिट्टी को पलटने की प्रक्रिया की जाती है। इसके बाद 3-4 जुताई से मिट्टी नरम व भुरभुरी हो जाती है। इसके उपरांत खेत को समतल कर क्यारियाँ बना ली जाती हैं। जीरे की फसल के लिए खाद उर्वरकों की मात्रा मिट्टी की जाँच के बाद देनी चाहिए।

कटाई और उपज

जीरे की कटाई का सबसे अच्छा समय तब होता है, जब बीज गहरे भूरे रंग के होतें हैं, किसान बीज निकालने के लिए इस विधि का प्रयोग करते हैं:-

(1) डंडों अथवा हाथों द्वारा रगड़कर जीरे को अलग करने की विधि: किन्नौर में थ्रेसिंग की प्रक्रिया में जीरे को भूसे से अलग करने के लिए डंडों का प्रयोग किया जाता है। यह कटाई के बाद जीरे को तैयार करने का पहला चरण है। इस प्रक्रिया में जीरे के डंठल या डालियों को डंडों अथवा हाथों द्वारा रगड़कर जीरे को अलग किया जाता है।

(2) जीरे को हवा द्वारा छानने की विधि: जनजातीय क्षेत्रों में जीरे को हवा द्वारा छानने की विधि से भूसे से अलग किया जाता है। इस विधि द्वारा मिश्रण के भारी घटकों को हवा की सहायता से हल्के पदार्थों से अलग किया जाता है। इस विधि में भूसे के हल्के कण हवा में उड़कर गिरते हैं, जबकि भारी कण तथा जीरा अलग होकर निकट ही एक ढेर बना लेते हैं। यह प्रक्रिया बहुत ही पुरानी है, इसके बाद साफ जीरे को एकत्रित कर लिया जाता है। यह विधि कम लागत तथा अधिक प्रभावशाली है और दुनियाभर के किसानों द्वारा सदियों से इसका उपयोग किया जाता रहा है।

खाद और उर्वरक: सामान्य परिस्थितियों में जीरे की फसल के लिए 20-25 क्विंटल गोबर या कम्पोस्ट खाद अंतिम जुताई के समय अच्छी तरह से मिला देनी चाहिए। बुआई के समय 60 किलोग्राम नाइट्रोजन, 30 किलोग्राम फॉस्फोरस, 30 किलोग्राम पोटाश खेत में देनी चाहिए। नाइट्रोजन की एक तिहाई तथा फॉस्फोरस व पोटाश की सम्पूर्ण मात्रा खेत में बिजाई या रोपाई से पहले खुली कतारों में अच्छी तरह से मिलानी चाहिए। नाइट्रोजन की शेष मात्रा को दो भागो में बांटकर बर्फ पिघलने के उपरांत अंकुरण तथा फूल निकलने की अवस्था में डालें। आमतौर पर हर साल लगाए गए बल्बों के किनारों में एन.पी.के. (5:3:2) डाली जाती है।

काले जीरे की निराई-गुड़ाई

खरपतवार नियंत्रण एवं सिंचाई: खरपतवारों की रोकथाम हेतु 3-4 निराई-गुड़ाई की आवश्यकता पड़ती है। स्टाम्प (पेंडीमेथिलीन) 5.0 लीटर या लासो (एलाक्लोर) 3.0 लीटर या फ्लूक्लोरेलिन 2.2 लीटर प्रति हैक्टर को 800 लीटर पानी में घोलकर निराई-गुड़ाई के तुरंत बाद छिड़काव अत्यंत प्रभावशाली होता है। काला जीरा की भरपूर फसल लेने के लिए कम से कम तीन सिंचाई अति आवश्यक होती हैं। पहली अंकुरण के एक सप्ताह के अंदर (अप्रैल में), दूसरी फूल आने पर (मई के शुरू में) एवं तीसरी बीज बनने की अवस्था (मध्य जून) में जरूरी होती है। फूल आने पर एक या दो सिंचाई, बीज गठन चरण, बीज और तेल सामग्री को बढ़ाने के लिए सहायक होते हैं।

उपयोग

औषधीय उपयोग: काले जीरे के बीजों में 3-6 प्रतिशत तक तेल होता है। यह मोनोटरपिन एलडिहाइड का मुख्य स्रोत होता है, जिसे कई आयुर्वेदिक औषधियों में प्रयोग किया जाता है। काला जीरा एंटीऑक्सीडेंट विटामिन ए, सी और के तथा खनिजों से समृद्ध होता है। एक मसाला और औषधीय पौधा होने के नाते, हिमाचली काला जीरा कई गुणों के कारण बेशकीमती है। इसे ब्रोंकाइटिस और खांसी के उपचार के लिए उपयोग किया जाता है। इसके बीज पाचन तंत्र को शांत करते हैं और यह आंतों की मांसपेशियों पर सीधे कार्य करके शूल, ऐंठन, सूजन, पेट फूलने तथा पेट में कीड़ा होना आदि समस्याओं में राहत देता है।

बीज का चूर्ण भूख को बढ़ाता है और कान के दर्द के इलाज में उपयोगी होता है।

काला जीरा के कंद

यह एक्जिमा, सूखी त्वचा और सोरायसिस जैसे त्वचा रोगों के इलाज के लिए उपयोगी है। यह हृदय स्वास्थ्य को बढ़ावा देने और रक्त शर्करा के स्तर को विनियमित करने में भी मदद करता है। यह मसूड़ों से खून निकलने से रोकने में मदद करता है और मुंह के छालों को ठीक करता है। यह अतिरिक्त पाचन गैस के कारण होने वाली हृदय अनियमितता का मुकाबला करता है। यह महिला प्रजनन स्वास्थ्य के लिए भी अच्छा माना जाता है, गर्भाशय की सूजन और मासिक धर्म की ऐंठन को कम करता है। यह गर्भवती महिलाओं में प्रसवपूर्व स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में सहायक है। यह उच्च आयरन सामग्री और दूध उत्पादन प्रदान करके स्तनपान करवाने वाली महिलाओं के लिए सहायक है। आहार में काला जीरा का दैनिक उपयोग रक्त शर्करा के स्तर को कम करके मधुमेह को नियंत्रित करने, स्मृति में सुधार करने में मदद करता है।

महत्वपूर्ण मसाला

काला जीरे के बीज खाद्य व्यंजनों को सुगंधित एवं स्वादिष्ट बनाने के लिए मसाले के रूप में उपयोग किये जाते हैं। काला जीरा में कई स्वास्थ्यवर्धक गुण छिपे होते हैं और इसलिए इसकी मदद से घर पर ही कई स्वास्थ्य समस्याओं का इलाज किया जाता है। काला जीरा का इस्तेमाल साबुत (बीज), पाउडर तथा अन्य कई तरह से इस्तेमाल किया जा सकता है। इसका उपयोग आमतौर पर कढ़ी, अचार में मसाले के रूप में किया जाता है। बीजों को भूना भी जा सकता है और सलाद या दही के लिए टॉपिंग के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। कुछ हद तक इसका उपयोग भारतीय चिकित्सा में एक कार्मिनेटिव के रूप में भी किया जाता है।

उत्पादन कम होने के कारण

काला जीरा की बढ़ती मांग के कारण स्थानीय आदिवासियों द्वारा बीजों का निरंतर संग्रह किया जाता है। स्थानीय लोग जड़ी बूटी से बीज इकट्ठा करने के लिए पूरे पौधे को उखाड़कर नष्ट कर देते हैं। इस मसाले के प्राकृतिक आवास का गंभीर अतिक्रमण हुआ है और इस वजह से फसल एक लुप्तप्राय प्रजाति बन गई है।

विलुप्त होने से बचाने हेतु इसका संरक्षण बहुत जरूरी है। इस फसल को इसके सतत उपयोग, खेती और आनुवंशिक सुधार के लिए अनुसंधान विकास की एक व्यापक योजना की अत्यंत आवश्यकता है। दुनियाभर के शोधकर्ताओं ने इसकी खेती प्रौद्योगिकियों पर विभिन्न अध्ययन किए हैं। आनुवंशिक सुधार, फसल संरक्षण, फसल कटाई के बाद के प्रबंधन और जैव प्रौद्योगिकी दृष्टिकोण इस उच्च मूल्य वाले औषधीय पौधे को बचाने के लिए संरक्षण प्रयासों को प्रभावी ढंग से आगे बढ़ाना समय की मांग है। ■

डंडों अथवा हाथों द्वारा रगड़कर जीरे को अलग करने की विधि

निवेदन

लेखक बंधु *फल फूल* पत्रिका के लिए अपने लेख और संबंधित फोटो, कवरिंग लैटर के साथ सिर्फ निम्न पोर्टल पर ही अपने मोबाइल नम्बर के साथ भेजें। ध्यान रखें कि फोटो मौलिक होने के साथ जेपीजे फॉर्मेट में और उच्च रेज्योल्यूशन की हों। लेख में अधिकतम 1200 शब्दों की संख्या रखने का प्रयास करें। इसके अतिरिक्त सुझाव और प्रतिक्रियाएं भी भेज सकते हैं।

हमारा पोर्टल है :
epatrika.icar.org.in

—संपादक

सब्जियों में बढ़ाएं पोषक तत्वों की मात्रा

हरजोत सिंह सोही, संदीप कुमार और **पी.एस. तंवर**

मानव जीवन में स्वस्थ एवं पोषण से समृद्ध आहार का अति महत्व है। वहीं सब्जियां हमारे शरीर को न केवल स्वस्थ रखती हैं, बल्कि पोषण मान भी प्रदान करती हैं। सब्जियों में विभिन्न ऐसे कई पोषक तत्व होते हैं, जिन्हें शरीर में होने वाले कई रोगों से प्रतिरोधी पाया गया है। वहीं, स्वास्थ्यवर्द्धक एवं खाद्य सुरक्षा में अहम सब्जियों को भी पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है, यदि किसी भी पोषक तत्व की सब्जी फसल में कमी देखी जाती है तो, वह फसल पोषण विहिन हो जाती है। ऐसे में उत्पादकों को सब्जियों की फसल में पोषक तत्वों की आपूर्ति के लिए विशेष ख्याल रखने की आवश्यकता है।

पौधों की वृद्धि एवं विकास के लिए कुल 17 पोषक तत्व आवश्यक हैं। किसी एक आवश्यक पोषक तत्व की कमी से पौधे के लिए अपने जीवन चक्र के वानस्पतिक या प्रजनन चरण को पूरा करना असंभव हो जाता है। प्रत्येक पौधे की अपनी इष्टतम पोषक सीमा के साथ-साथ न्यूनतम आवश्यकता स्तर भी होता है। इस न्यूनतम स्तर से नीचे, पौधों में पोषक तत्वों की कमी के लक्षण दिखाई देने लगते हैं। ऐसी कमी संबंधित तत्व के लिए विशिष्ट होती है और केवल उस तत्व की आपूर्ति करके ही इसे रोका या ठीक किया जा सकता है।

नाइट्रोजन: इसकी कमी आमतौर पर फूलगोभी, मूली, गाजर, भिंडी और मिर्च जैसी सब्जियों की फसलों में दिखाई देती है। कमी के लक्षण सबसे पहले पुरानी पत्तियों पर दिखाई देते हैं। पत्तियों की नोंक हल्के पीले रंग की हो जाती है, जो समय के साथ प्राथमिक पत्ती शिरा के माध्यम से पत्ती की कली की ओर बढ़ती है। पत्तियों का सामान्य हरा रंग फीका होकर पीले-हरे रंग के ठोस पैटर्न में बदल जाता है। गंभीर स्थिति में पौधा पूरी तरह पीला हो सकता है। पौधों की वृद्धि धीमी हो जाती है, तना पतला, रेशेदार और कठोर हो जाता है और फूल कम आते हैं।

नाइट्रोजन तत्व की कमी के लक्षण

उपाय: फसल में अनुशंसित गोबर की खाद और नाइट्रोजन सही समय पर डालें।

पोटेशियम: पोटेशियम की कमी आमतौर पर आलू और भिंडी जैसी सब्जियों की फसल में दिखाई देती है। कमी का पहला संकेत पौधे के आधार पर भूरे-हरे रंग की पत्तियों का विकसित होना है। पत्तियाँ कांस्य और पीला-भूरा रंग विकसित करती हैं। पत्ती के किनारे भूरे हो जाते हैं और कप नीचे की ओर हो जाते हैं। पत्ती की शिराओं के किनारे धब्बे विकसित होते हैं। ऊतक खराब हो जाते हैं और मर जाते हैं। जड़ें कम विकसित और भूरे रंग की होती हैं।

कृषि विज्ञान केंद्र, हंडिया, बरनाला-148107

उपायः फसल की आवश्यकता के अनुसार बुआई के समय पोटेशियम की अनुशंसित मात्रा डालें।

पोटेशियम तत्व की कमी के लक्षण

मैंग्नीजः इसकी कमी आमतौर पर फूलगोभी, मूली और धनिया में दिखाई देती है। कमी के लक्षण नई पत्तियों पर अंतरशिरा क्लोरोसिस के रूप में हल्के भूरे पीले से गुलाबी भूरे या भूरे रंग के अलग-अलग आकार के धब्बों के साथ दिखाई देते हैं। बाद में, धब्बे मिलकर शिराओं के बीच एक लकीर या बैंड बनाते हैं जो हरे रहते हैं। तीव्र कमी में पूरा पौधा मर सकता है।

उपायः जैसे ही कमी के लक्षण दिखाई दें, 0.2-0.5% मैंग्नीज सल्फेट घोल (100 लीटर पानी में 200-500 ग्राम मैंग्नीज सल्फेट) का एक छिड़काव करें। बाद में, धूप वाले दिनों में साप्ताहिक अंतराल पर 2-4 छिड़काव करें।

मैंग्नीज तत्व की कमी के लक्षण

मृदा परीक्षण जरूरी

विकास की समस्याओं में किसानों को मिट्टी परीक्षण की सलाह दी जाती है। मिट्टी परीक्षण कई कारणों से महत्वपूर्ण हैः फसल उत्पादन को अनुकूलित करने के लिए, अतिरिक्त उर्वरकों के अपवाह और लीचिंग से पर्यावरण को दूषित होने से बचाने के लिए, पौधों की संस्कृति की समस्याओं के निदान में सहायता करने के लिए, पोषण संतुलन में सुधार करने के लिए, बढ़ते मीडिया के लिए और केवल आवश्यक उर्वरक की मात्रा का उपयोग करके पैसे और ऊर्जा बचाने के लिए।

आयरन तत्व की कमी के लक्षण

आयरनः मिर्च की फसल में आयरन की कमी सबसे अधिक देखी जाती है। मिट्टी में तांबा, जस्ता और फॉस्फोरस की उच्च सामग्री भी आयरन की कमी का कारण बन सकती है। इसकी कमी से नई पत्तियों का रंग पहले शिराओं के बीच हल्का पीला हो जाता है। बाद में पूरी पत्तियाँ पीली हो जाती हैं। ऊतक का परिगलन और मरना आमतौर पर अनुपस्थित होता है। तीव्र कमी में नई पत्तियाँ सफेद रंग की हो जाती हैं।

उपायः जैसे ही कमी के लक्षण दिखाई दें, 0.2-0.5% आयरन सल्फेट घोल (100 लीटर पानी में 200-500 ग्राम मैंग्नीज सल्फेट) का एक छिड़काव करें। बाद में, कमी की गंभीरता के अनुसार साप्ताहिक अंतराल पर 2-3 छिड़काव करें।

फॉस्फोरसः सर्दी के मौसम में फूलगोभी, पत्तागोभी और धनिया में फॉस्फोरस की कमी आमतौर पर मिट्टी से पौधों को फॉस्फोरस न मिल पाने के कारण हो जाती है। इसकी कमी से पत्तियां छोटी और अक्सर सामान्य से अधिक गहरे हरे रंग की हो जाती हैं। पत्तियों की निचली सतह लाल-बैंगनी रंग की हो जाती है और तीव्र कमी में पूरा पौधा और निचली सतह बैंगनी रंग की दिखाई देती है एवं विकास मंद हो जाता है। फल लगने और फल पकने में देरी हो जाती है।

उपायः फसल की अनुशंसा के अनुसार फॉस्फोरस की अनुशंसित मात्रा बुआई के समय मिट्टी में डालें। ■

फॉस्फोरस तत्व की कमी के लक्षण

सल्फर

सल्फर की कमी से ग्रस्त प्रमुख सब्जी फसलें मटर और मिर्च हैं। लक्षण सबसे पहले छोटी पत्तियों पर दिखाई देते हैं और सामान्य हरा रंग फीका पड़ जाता है। शीर्ष को छोड़कर सबसे ऊपरी पत्तियाँ हल्की पीली हो जाती हैं, जबकि निचली पत्तियाँ लंबे समय तक हरे रंग को बरकरार रखती हैं। यह नाइट्रोजन की कमी से स्पष्ट रूप से भिन्न है जहां निचली पत्तियों से पीलापन शुरू होता है।

उपायः सल्फर की कमी वाली मिट्टी में, सिंगल सुपरफॉस्फेट का उपयोग करें। जहां फॉस्फोरस को सिंगल सुपरफॉस्फेट के रूप में नहीं डाला गया था, वहां फसल की सल्फर आवश्यकता को पूरा करने के लिए बुआई से पहले प्रति एकड़ 50-100 किलोग्राम जिप्सम डालें।

सल्फर तत्व की कमी के लक्षण

स्वादिष्ट मैकाडामिया नट्स का उत्पादन

प्रकाश चंद्र त्रिपाठी, अनुराधा साने, कनुप्रिया और **प्रीति सिंह**

मैकाडामिया ऑस्ट्रेलियाई मूल का वृक्ष है, जो उत्तर-पूर्वी ऑस्ट्रेलियाई तट के वर्षा वनों में पाया जाता है। मैकाडामिया प्रोटियासी परिवार का सदस्य है। इसे खाने योग्य मेवों के लिए उगाया जाता है। इसकी गिरी स्वादिष्ट और पौष्टिक होती है। मैकाडामिया की कई प्रजातियाँ ऑस्ट्रेलिया में मौजूद हैं लेकिन केवल दो प्रजातियाँ, मैकाडामिया इंटीग्रिफोलिया और मैकाडामिया टेट्राफिला एवं उनके संकर की व्यावसायिक रूप से खेती की जाती है। इनमें मैकाडामिया इंटीग्रिफोलिया अधिक लोकप्रिय है। इसके फलों का छिलका चिकना और गुठली लगभग गोलाकार, चिकनी सतह वाली होती है, जबकि मैकाडामिया टेट्राफिला का छिलका खुरदुरा एवं गुठली थोड़ी अण्डाकार होती है। मैकाडामिया एक सदाबहार वृक्ष हैं जो 10 मीटर तक ऊंचे हो सकते हैं। इसके फल गोल, गहरे हरे रंग तथा 2-4 सें.मी. व्यास के होते हैं। फल का छिलका निकालने पर बहुत सख्त गोलाकार भूरे रंग की गुठली प्राप्त होती है। इसके अंदर सफेद क्रीम रंग की गिरी होती है। मैकाडामिया नट स्वाद में काजू जैसा होता है लेकिन इसका आकार गोलाकार और गिरी अधिक वसायुक्त होती है।

मैकाडामिया की गिरी में 14 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, 76 प्रतिशत वसा और 8 प्रतिशत प्रोटीन की मात्रा होती है। एक सौ ग्राम मैकाडामिया की गिरी 740 किलो कैलोरी ऊर्जा प्रदान करती है। इसमें थायमिन, विटामिन बी-6, मैंग्नीज, आयरन, मैग्नीशियम और फॉस्फोरस प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं (सारणी 1)। बादाम और काजू की तुलना में, मैकाडामिया की गिरी में अधिक वसा और अपेक्षाकृत कम प्रोटीन होता है। इसके वसा में एकल असंतृप्त वसा की अधिक मात्रा (59%) होती है, जिसमें 17% ओमेगा-7-पामिटोलिक एसिड होता है। मैकाडामिया की गिरी का उपयोग नाश्ते, मिठाइयों, बिस्किट और आइसक्रीम आदि बनाने में भी किया जाता है। मैकाडामिया के छिलके का उपयोग क्रीम, बायोचार, कार्बन फिल्टर आदि में किया जा सकता है।

बागवानी विज्ञान प्रभाग, कृषि अनुसंधान भवन-II, पूसा, नई दिल्ली-110012

क्षेत्रफल एवं उत्पादन

मैकाडामिया का वैश्विक उत्पादन वर्ष 2018 में 211,000 टन था। दक्षिण अफ्रीका 54,000 टन उत्पादन के साथ मैकाडामिया का अग्रणी उत्पादक था। मैकाडामिया का व्यावसायिक उत्पादन भूमध्यसागरीय, समशीतोष्ण या उष्णकटिबंधीय जलवायु वाले दक्षिण पूर्वी एशिया, दक्षिण अमेरिका, दक्षिण अफ्रीका, ऑस्ट्रेलिया और उत्तरी अमेरिका के कई देशों में किया जाता है। भारत में केरल, तमिलनाडु, कर्नाटक और ओडिशा के कुछ बगीचों में मैकाडामिया की खेती का सफल प्रयास किया गया है, लेकिन व्यावसायिक खेती अभी आरम्भ नहीं हुई है।

जलवायु एवं मिट्टी

मैकाडामिया के वृक्षों को गर्म, आर्द्र उपोष्णकटिबंधीय जलवायु की आवश्यकता होती है। उपजाऊ मिट्टी वाले और 100 से 200 सें.मी. वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्र मैकाडामिया की खेती के लिए उपयुक्त होते हैं सामान्यतौर पर मैकाडामिया के वृक्ष 10 डिग्री सेल्सियस से कम तापमान पसंद नहीं करते हैं। हालांकि एक बार स्थापित होने के बाद, वे 2.50 डिग्री सेल्सियस तक का तापमान सहन कर सकते हैं। मैकाडामिया की खेती के लिए लंबे शुष्क

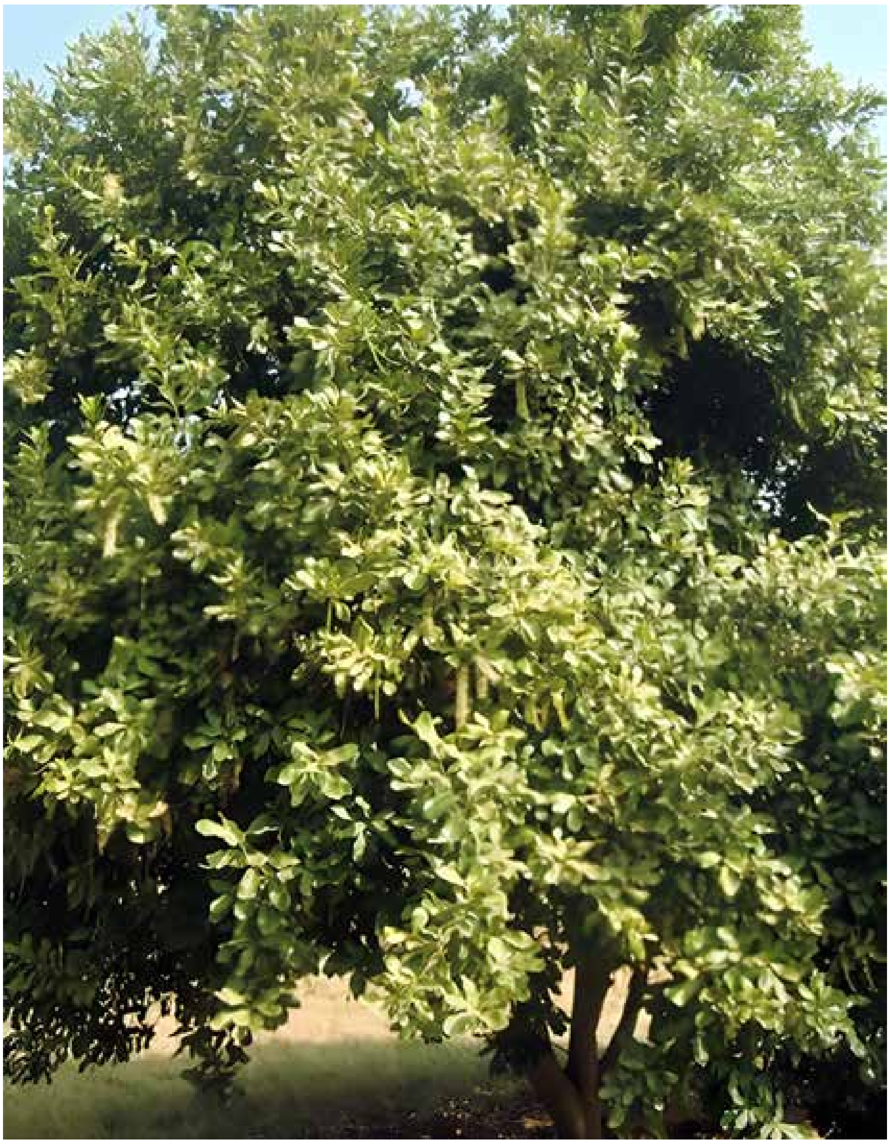

मैकाडामिया नट्स का व्यस्क वृक्ष

मौसम और 5.5-7.5 पीएच मान के साथ अच्छी जल निकासी वाली रेतीली दोमट हल्की मिट्टी वाली जगहों को प्राथमिकता दी जाती है।

भारत में बेंगलुरु की परिस्थितियों में काकेआ और किआउ किस्में अच्छी तरह से उगती पायी गयी हैं।

किस्में

विश्व के विभिन्न देशों में मैकाडामिया की अनेक किस्में उगायी जाती हैं। इनमें से एम. इंटीग्रिफोलिया की काकेया, इकाइका, किआउ, किउहौ, काउ, पुर्विस, मकाई और मौका; एम. टेट्राफिला की ग्रीबर, रेनॉउन, एनामौर, मैमथ, सेवेल और प्रोबर्ट-2 और संकर किस्में ब्यूमोंट, नेलमक-1 और नेलमक-2 उल्लेखनीय हैं। दक्षिण अफ्रीका में ब्यूमोंट सबसे व्यापक रूप से उगायी जाने वाली किस्म है। इसके बाद 14, 816, 814, नेलमैक 2, 695 और 842 प्रमुख हैं।

ब्यूमोंट

यह *मैकाडामिया इंटीग्रिफोलिया* × *एम. टेट्राफिला* के संकरण से विकसित वाणिज्यिक किस्म है, जो ऑस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड में व्यापक रूप से उगायी जाती है। इसमें वसा की मात्रा अधिक होती है, लेकिन मिठास नहीं होती है। यह सबसे जल्दी फल देने वाली किस्मों में से एक है, आमतौर पर चौथे वर्ष में फल देने आरम्भ कर देती है और उसके बाद पैदावार में लगातार वृद्धि होती है। व्यावसायिक बगीचों में, 8 वर्ष की आयु तक यह प्रति वृक्ष 18 किलोग्राम तक पैदावार देती है।

नेलमैक-III

यह *मैकाडामिया इंटीग्रिफोलिया* × *एम. टेट्राफिला* के संकरण से विकसित एक दक्षिण अफ्रीकी किस्म है। इसकी गिरी मीठी होती है। इसकी गिरी और मेवा का अनुपात अधिक है। दस वर्ष पुराने वृक्षों की औसत पैदावार 22 किलोग्राम प्रति पेड़ होती है। यह 'ब्यूमोंट' के परागण के लिए एक लोकप्रिय किस्म है।

प्रवर्धन

मैकाडामिया को बीजों द्वारा प्रवर्धित किया जा सकता है, लेकिन उत्पादकता और गिरी गुणवत्ता में अत्यधिक भिन्नता के कारण बीजू वृक्ष असंतोषजनक साबित हुए हैं। इसलिए मैकाडामिया की व्यावसायिक खेती कलमी वृक्षों से होती है। कलमी पेड़ औसतन 3-4 गुणा अधिक मेवा पैदा करते हैं। मैकाडामिया को बीजू वृक्ष के मूलवृन्त पर वेज कलम द्वारा प्रवर्धित किया जाता है। पारंपरिक कलम द्वारा मैकाडामिया वृक्षों को बीज को अंकुरित करने से लेकर कलम और खेत में रोपण तक 24 माह लगते हैं, मिनी कलम द्वारा वृक्षों को बीज से 10-12 महीने लगते हैं और नई माइक्रो-कलम तकनीक में केवल 8-12 माह लग सकते हैं।

मूलवृन्त

आमतौर पर मूलवृन्त के लिए बीजू पौधों का उपयोग किया जाता है। मैकाडामिया के बीजू पौधो को बीज अंकुरण से लेकर कलम योग्य तैयार होने तक 8-10 महीने

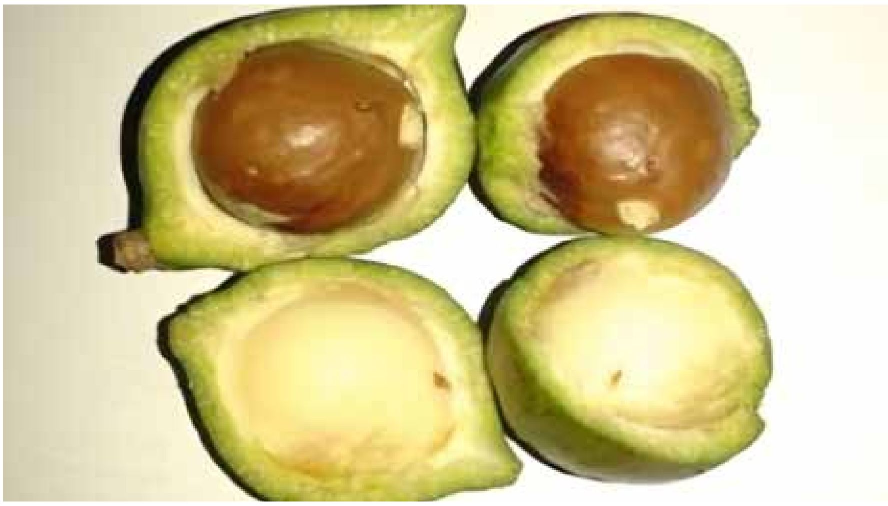

मैकाडामिया मेवा

लगते हैं। दक्षिण अफ्रीका में सबसे अधिक इस्तेमाल किया जाने वाला मूलवृन्त एच-2 है। इसका प्रवर्धन आसान और पौधे सशक्त एकसमान होते हैं।

रोपण

वृक्षों की संख्या, किस्म के प्रकार, मिट्टी की उर्वरता और स्थलाकृति के आधार पर रोपण की दूरी 6×3 मीटर से 10×4 मीटर तक हो सकती है। हालाँकि मैकाडामिया स्व-परागित होता है, लेकिन बगीचे में कम से कम 2 किस्में लगाना बेहतर होता है।

खाद, उर्वरक और सिंचाई

खाद और उर्वरकों की मात्रा, मिट्टी के प्रकार और पौधों की आयु पर निर्भर करती है। आमतौर पर पौधों को 40-50 किलोग्राम गोबर की खाद के अलावा 450:150:500 ग्राम नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटाश प्रति पेड़ की वार्षिक खुराक की सिफारिश की जाती है। नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटाश को दो समान भागों में विभाजित कर देना चाहिए। सिंचाई की मात्रा वर्षा, वाष्पीकरण, मिट्टी के प्रकार और पौधों की आयु पर निर्भर करती है।

कटाई-छंटाई

एक मुख्य तने और क्षैतिज शाखाओं के ढांचे के साथ एक वृक्ष बनाने के लिए, जमीन से आधे मीटर पर छंटाई करने की सिफारिश की जाती है। इसके बाद हर आधे मीटर के अंतराल पर छंटाई करने की सिफारिश की जाती है। इससे मुख्य तने और क्षैतिज शाखाओं का ढाँचा तैयार हो जाता है। एक बार ढाँचा बनने के बाद समय-समय पर कमजोर एवं क्षतिग्रस्त शाखाओं को काटते रहना चाहिए।

सारणी : मैकाडामिया की गिरी में पोषक तत्व (खाद्य भाग प्रति 100 ग्राम)

पोषक तत्व	मात्रा	पोषक तत्व	मात्रा
प्रोटीन	7.9 ग्राम	कैल्शियम	85 मि.ग्रा.
वसा	75.8 ग्राम	पोटेशियम	368 मि.ग्रा.
कार्बोहाइड्रेट	13.8 ग्राम	आयरन	3.69 मि.ग्रा.
रेशा	8.6 ग्राम	मैग्नीशियम	130 मि.ग्रा.
विटामिन-सी	1.2 मि.ग्रा.	मैंग्नीज	4.1 मि.ग्रा.
नियासिन	2.473 मि.ग्रा.	फॉस्फोरस	188 मि.ग्रा.
राइबोफ्लेविन	0.162 मि.ग्रा.	जस्ता	1.30 मि.ग्रा.
थायमिन	1.195 मि.ग्रा.	नमी	1.4 ग्राम
विटामिन-ई	0.54 मि.ग्रा.	ऊर्जा	740 किलो कैलोरी

उपज, कटाई एवं कटाई उपरांत प्रबंधन

मैकाडामिया के फूल उभयलिंगी होते हैं। इसके बागानों में मधुमक्खियों की दो प्रजातियां प्रमुख परागणकर्ता हैं। औसतन 7 वर्षों के वृक्षों पर फल लगने लगते हैं। हालाँकि, 20-वर्षीय वृक्ष पूर्ण उपज देते हैं और लगभग 40-60 वर्षों तक उपज देते रहते हैं। बेंगलुरु की परिस्थितियों में, फूल मार्च, जुलाई-अक्टूबर के दौरान आते हैं और फल अक्टूबर से मार्च में तैयार होते हैं। फल गुच्छों में लगते हैं और परिपक्व होने पर, छिलका सूखने और फटने लगता है। फल स्वाभाविक रूप से गिरते हैं और हाथ से एकत्र किये जा सकते हैं। बेंगलुरु की परिस्थितियों में 12 वर्ष पुराने वृक्ष से 20-22 किलोग्राम उपज प्राप्त की गयी। फलों की तुड़ाई के बाद, तुरंत छिलका निकालने और सुखाने का काम शुरू करना चाहिए। कठोर खोल को तोड़ने के बाद, कच्ची गुठली को लगभग 1.5% नमी तक सुखाया जाता है। सामान्यतया इसे भूनकर और नमक डालकर खाया जाता है। भुने हुए मेवों का उपयोग चॉकलेट-लेपित नट कैंडीज, बेकरी उत्पादों और आइसक्रीम में किया जा सकता है।

मैकाडामिया के फूल

कीट प्रबंधन

युवा वृक्षों में मैकाडामिया फेल्टेड कोसिड, शल्क कीटों, मैकाडामिया ट्विग-गर्डलर, मैकाडामिया पत्ती भेदक, लाल पत्ती भृंग प्रमुख कीट हैं। इनका प्रकोप होने पर आमतौर पर तुरंत छिड़काव की आवश्यकता होती है। अधिकांश बगीचों में चूहे बड़ी समस्या हैं। चूहे पके फलों को नुकसान पहुंचाते हैं, इनका तुरंत नियंत्रण आवश्यक है।

रोग प्रबंधन

युवा वृक्षों में तना कैंकर प्रमुख रोग है। जहां नासूर छोटे होते हैं, वहां प्रभावित छाल और लकड़ी को एक तेज चाकू से छीलकर और पेंट के साथ पंजीकृत तांबायुक्त कवकनाशी के साथ तनों को अच्छी तरह से भिगोना चाहिए। प्रभावित क्षेत्रों पर मेटलैक्सिल और कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का छिड़काव करना चाहिए। वैकल्पिक रूप से, प्रभावित वृक्षों पर फॉस्फोरस एसिड का दो से तीन माह नियमित छिड़काव करना चाहिए।

मैकाडामिया नट हमारे देश के लिए नई फसल है। भारत में मैकाडामिया के बहुत कम बगीचे हैं। इसके पोषक मूल्य के कारण इस गिरी की अंतर्राष्ट्रीय बाजार में मांग बहुत तेजी से बढ़ रही है। हमारे देश के कई क्षेत्र इसकी खेती के लिए उपयुक्त हैं। यह फसल विविधीकरण और किसानों की आय बढ़ाने के लिए उपयुक्त हो सकती है। ■

सब्जी पौधशाला का उन्नत प्रबंधन

राहुल देव[1], **निर्मल हेडाऊ**[2], **अमित पश्चापुर**[3], **रेनू सनवाल**[4] और **लक्ष्मी कान्त**[5]

नर्सरी यानि पौधशाला उस स्थान को कहा जाता है जहाँ बीजों की बुआई कर छोटी-छोटी पौध तैयार की जाती है। जब तक कि यह पौध मुख्य खेत में लगाने के लिए तैयार न हो जाएँ तब तक इनका उचित ध्यान रखा जाता है। कुछ सब्जियों में शुरुआती वृद्धि के समय से ही खास ध्यान रखने की आवश्यकता होती है। जिन सब्जियों के बीज बहुत छोटे-छोटे आकार के होते हैं, उन सब्जियों की नर्सरी लगाकर पौध तैयार की जाती है और बाद में खेत में रोपाई की जाती है। इनमें टमाटर, शिमला मिर्च, मिर्च, बैंगन, फूलगोभी, पत्तागोभी, ब्रोकली, प्याज, गाँठगोभी आदि सब्जी फसलें शामिल हैं।

सब्जी उत्पादन में पौधशाला का महत्व अधिक है। वैज्ञानिक ढंग से पौधशाला का प्रबंधन अति आवश्यक है। उन्नत तकनीक से पौधशाला का प्रबंधन न किया जाए तो पूरी पौध नष्ट हो जाती है। इससे अधिक नुकसान के अलावा रोपाई से भी वंचित होना पड़ जाता है। ऐसे में विभिन्न सब्जियों के पौधों को वैज्ञानिक ढंग से पौधशाला में तैयार करना आवश्यक हो जाता है।

मिट्टी के प्रकार

उन्नत और स्वस्थ पौध तैयार करने के लिए उपजाऊ और स्वस्थ मिट्टी का होना भी बहुत जरूरी है। सब्जी फसलों की नर्सरी के लिए दोमट या बलुई दोमट मिट्टी जिसमें कार्बनिक पदार्थों की अच्छी मात्रा उपलब्ध हो, ज्यादा उपयुक्त रहती है। मिट्टी का पीएच मान 7 के आस-पास होना चाहिए। नर्सरी तैयार करने के लिए कुदाल या फावड़े की सहायता से नर्सरी वाली जमीन की जुताई कर लेनी चाहिए। मिट्टी के बचे हुए ढेले, पत्थर और खरपतवार हटाकर जमीन को समतल करना चाहिए। इसमें प्रति वर्ग मीटर मिट्टी के हिसाब से 2 कि.ग्रा. अच्छे से सड़ी हुई खाद या 500 ग्रा. वर्मीकंपोस्ट मिला लेना चाहिए, अगर भारी मिट्टी हो तो प्रति वर्ग मीटर मिट्टी में 2-3 कि.ग्रा. बालू मिलानी चाहिए।

क्यारी तैयार करने की विधि

नर्सरी का क्षेत्रफल उत्पादन की आवश्यकता के अनुसार होता है। इसकी लम्बाई 3-4 मीटर तक रखी जा सकती है किंतु चौड़ाई 1 मीटर से ज्यादा नहीं होनी चाहिए। साथ ही दो नर्सरी के बीच में 1 फीट के रास्ते की जगह छोड़ी जाती है, जिससे खरपतवार निकालने व निराई-गुड़ाई में आसानी हो सके। मौसम के अनुसार जमीन से नर्सरी बैड की ऊँचाई भी अलग-अलग रखी जाती है। गर्मियों के मौसम में बनाई जाने वाली नर्सरी जमीन की सतह के पास यानी समतल बनाई जाती है। बरसात के समय पर पौध तैयार करने के लिए नर्सरी बैड को 10-15 सें.मी. ऊँचा उठाकर तैयार किया जाता है। सर्दियों में कम तापमान और ठण्डी हवा से बचाने के लिए नर्सरी को सूखी घास या पॉलीथीन से ढक देना चाहिए जिससे बीज का जमाव जल्दी हो सके।

सिफारिशें

- नर्सरी बनाने के लिए क्यारी का चयन हमेशा ऊँची जगह पर करना चाहिए जिससे कि पानी का जमाव न हो सके।
- नर्सरी ऐसे स्थान में बनानी चाहिए जहाँ उसे उचित धूप मिल सके। यह अधिक छाया या वायु वेग वाली जगह नहीं होनी चाहिए।
- सिंचाई की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।
- पालतू और जंगली पशुओं से नर्सरी को बचाने की भी व्यवस्था होनी चाहिए।

[1,3]वैज्ञानिक; [2]प्रभागाध्यक्ष, फसल सुधार; [4]मुख्य तकनीकी अधिकारी; [5]निदेशक, भाकृअनुप-विवेकानंद पर्वतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान, अल्मोड़ा

फूलगोभी की नर्सरी

स्वस्थ पौध हेतु क्यारियों का उपचार

अच्छी पौध के लिए यह आवश्यक है कि नर्सरी की मिट्टी में कोई रोग पैदा करने वाले कारक न हों। अत: मिट्टी में मौजूद सभी रोग उत्पन्न करने वाले कारकों को नष्ट कर देना चाहिए। इसके लिए फॉर्मेल्डीहाइड द्वारा उपचार बुआई से 15-20 दिन पहले करना चाहिए। इसमें 4 लीटर प्रति वर्ग मीटर के हिसाब से फॉर्मेल्डीहाइड (4%) का प्रयोग कर क्यारियों को गीला किया जाता है। इसके बाद उपचारित क्यारियों को काली पॉलिथीन से ढककर चारों तरफ गीली मिट्टी से दबा देते हैं जिससे हवा का संचार न हो सके। उपचार करने के 4-5 दिन बाद और बुआई के 3 दिन पहले पॉलिथीन हटा लेनी चाहिए और हल्की गुड़ाई कर लेनी चाहिए जिससे मिट्टी, फॉर्मेलीन गैस से मुक्त हो जाए।

बीजों का उपचार

नर्सरी में बीज की बुआई से पहले उन्हें मृदाजनित रोग आदि से बचाने के लिए उपचार करना भी जरूरी है। कुछ रोग ऐसे होते हैं जिनको केवल बीज के उपचार से ही रोका जा सकता है। साथ ही बीज का उपचार काफी आसान और सस्ता भी पड़ता है। बुआई से पहले बीज के उपचार के लिए नर्सरी में अधिकतर सब्जी बीजों का उपचार करने के लिए कैप्टॉन, थीरम या बाविस्टीन की 2 ग्राम मात्रा प्रति किग्रा. बीज में मिलाई जाती है।

पौधशाला बनाने के लाभ

- नर्सरी में बीजों के जमाव और आगे की वृद्धि के लिए अनुकूल वातावरण बनाया जा सकता है।
- नर्सरी में पौधों पर आसानी से नजर रखी जा सकती है और उन्हें कीट, रोग व खरपतवार से आसानी से बचाया जा सकता है।
- नर्सरी में लगाया गया पौधा स्वस्थ होता है और जड़ों की वृद्धि और विकास भी सही से होने के कारण बाद में उत्पादन भी अच्छा मिलता है।
- नर्सरी बनाने से भूमि और श्रम दोनों की बचत होती है, साथ ही अधिक सघन फसलचक्र भी अपनाया जा सकता है।
- नर्सरी बनाने से मुख्य खेत को तैयार करने के लिए अतिरिक्त समय मिल जाता है।

बीज की बुआई

नर्सरी में पंक्ति बनाकर बुआई करना अधिक उपयुक्त होता है। पंक्ति को अँगुली या किसी लकड़ी की सहायता से बनाया जा सकता है। पंक्तियाँ 1.5 से 2 सें.मी. गहरी और पंक्तियों के बीच की दूरी 5-7 सें.मी. होनी चाहिए। बुआई के बाद बीज को बारीक छनी गोबर की खाद से ढक देना चाहिए। मिट्टी की नमी और तापमान को बनाये रखने के लिए मल्च की जरूरत होती है ताकि समय पर बीज का जमाव हो सके। इसके लिए नर्सरी बैड के ऊपर सूखी घास या पुआल की परत या फिर सर्दियों में प्लास्टिक मल्च बिछा दी जाती है।

कठोरीकरण (हार्डनिंग) के लाभ

पौध के कठोरीकरण से तात्पर्य है कोई भी ऐसा उपाय जिसके द्वारा पौध के ऊतक इतने सशक्त व मजबूत हो जायें कि वह प्रतिकूल परिस्थितियाँ झेल सकें। कठोरीकरण पौधों में होनी वाली एक शारीरिक प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में पौध को नर्सरी से निकालने के 8 से 10 दिनों पहले कुछ कृत्रिम प्रतिकूल परिस्थितियाँ अपनाई जाती हैं जैसे सूर्य की तेज रोशनी, कम सिंचाई आदि।

कठोरीकरण के लिए आवश्यकता

- रोपाई के 4-5 दिन पहले नर्सरी की सिंचाई रोक देना।
- पौध को रोपाई से पहले उन्हें सूर्य की तेज रोशनी में छोड़ देना जिससे उनका कठोरीकरण हो सके।
- कम तापमान में भी पौधों की वृद्धि धीमी हो जाती है जो इनके कठोरीकरण में सहायता करती है।

रोग व नियंत्रण

पौध गलन या आर्द्रगलन रोग नर्सरी की एक प्रमुख समस्या है। यह कई प्रकार के फंफूदों द्वारा होता है। जिसकी वजह से बीज जमीन के नीचे अंकुरण से पहले या अंकुरण के 10-15 दिन बाद पौध जमीन की सतह से गलकर मर जाते हैं। बरसात के समय इस रोग की समस्या बढ़ जाती है।

नियंत्रण

- प्रारंभ में ही मृदा निर्जलीकरण या बीज का उपचार कर लेना चाहिए।
- प्रतिवर्ष एक ही स्थान पर नर्सरी नहीं बनानी चाहिए क्योंकि इससे रोग बढ़ने की आशंकाएँ बढ़ जाती हैं।
- नर्सरी ऊँचे स्थान पर बनानी चहिए जहाँ बारिश का पानी न भर सके और सूर्य का उचित प्रकाश रहे।
- नर्सरी की क्यारी हमेशा जमीन से 15-20 सें.मी. उठी हुई होनी चाहिए साथ ही जल निकासी का भी प्रबंधन होना चाहिए।
- बीज को अधिक घना नहीं बोना चाहिए।
- जैविक विधि में रोग लगने की दशा में नर्सरी में ट्राइकोडर्मा (5 ग्राम/लीटर पानी) का छिड़काव करें या रासायनिक विधि में कार्बेण्डाजिम (2 ग्राम/लीटर पानी) का छिड़काव करें।

खेत में पौध रोपण

पौध जब 10 से 15 सें.मी. लम्बे हो जाये और 4 से 6 पत्तियाँ निकल आयें तब वह मुख्य खेत में रोपाई के लिए तैयार हो जाते हैं। टमाटर, बैंगन, मिर्च व गोभीवर्गीय सब्जियों में पौध तैयार होने में लगभग 4 से 6 सप्ताह लगते हैं, जबकि प्याज की पौध में 8 सप्ताह तक का समय लगता है। पौध उखाड़ने के 24 घण्टे पहले नर्सरी में अच्छे से पानी छोड़ दें जिससे मिट्टी मुलायम हो जाये और पौध उखाड़ते समय जड़ों को कम से कम नुकसान हो। पौध रोपण हमेशा शाम के समय ही करें और इसके तुरन्त बाद हल्की सिंचाई करे लें ताकि पौध आसानी से स्थापित हो जाए। ■

खाद्य प्रसंस्करण द्वारा महिलाओं का सशक्तिकरण

रीतू सिंह[1] और डी. के. राणा[2]

खाद्य प्रसंस्करण के माध्यम से बड़ी संख्या में रोजगार अवसरों का सृजन किया जा रहा है आज देश के ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में प्रसंस्करित खाद्य उत्पादों, होटल, रेस्टोरेंट आदि व्यवसाय का फैलाव हो रहा है। महिलाएं स्वयं या समूह के माध्यम से खाद्य प्रसंस्करण के कार्य में अहम योगदान दे सकती हैं। वर्तमान में बाजार में खाद्य प्रसंस्करित उत्पादों की विस्तृत श्रृंखला उपलब्ध है; जैसे अचार, चटनी, जैम, जेली, कैचअप, पापड़, फल मिश्रित चॉकलेट, टॉफी व अन्य उत्पाद। फलों के टुकड़े, मिश्रित दही, दूध तथा पनीर आदि की भी बहुतायत में मांग है। इसके अतिरिक्त फलों के कंसन्ट्रेट, फल-सब्जियों के जूस, प्यूरी इत्यादि भी काफी लोकप्रिय उत्पाद हैं। सूखे फल-सब्जियां भी सुविधाजनक अत्यधिक पोर्टेबल और टिकाऊ होती हैं। वर्तमान में कम वसायुक्त उत्पाद, विटामिन/खनिज फोर्टिफाइड उत्पाद, कैलोरी मुक्त तथा कम कैलोरी युक्त उत्पाद उपभोक्ताओं को काफी भा रहे हैं। यही नहीं फल-सब्जियों के अपशिष्ट का उपयोग कर मूल्यवर्धित उत्पाद जैसे उबटन, लिप बाम, फल-सब्जी रेशे के बिस्किट, छिलके व बीजों से खाद, उच्च प्रोटीनयुक्त पशु आहार आदि बनाये जा सकते हैं। महिलाएं इनमें से किसी भी प्रकार के खाद्य प्रसंस्करित उत्पाद बनाने के लिए नजदीकी कृषि विज्ञान केंद्र से प्रशिक्षण अथवा तकनीकी जानकारी लेकर अपना उद्यम स्थापित कर सकती हैं।

खाद्य प्रसंस्करण उद्योग, कृषि क्षेत्र और उपभोक्ता के बीच एक महत्वपूर्ण कड़ी है। यह शहरी और ग्रामीण उपभोक्ताओं को विभिन्न तरीकों से प्रभावित करता है। यह बुनियादी पोषण समस्या को दूर करने से लेकर उत्पाद विविधता के विकल्प प्रदान करता है। पारम्परिक रूप से फल एवं सब्जियां संतुलित आहार के महत्वपूर्ण घटक के रूप में मानी जाती हैं।

उपभोक्ता ताजा और स्वस्थ फलों व सब्जियों के लिए अधिक मूल्य का भुगतान भी करने के लिए तैयार हो जाते हैं। उपभोक्ताओं द्वारा स्वस्थ फल एवं सब्जी उत्पादों में विविधता और स्वाद की मांग की जाती है। विशिष्ट भौगोलिक स्थिति के कारण विश्व के सभी प्रकार के फलों एवं सब्जियों का भारत में उत्पादन किया जाता है। कई बार फसल अच्छी होने की स्थिति में बाजार भाव में कमी आ जाती है। इससे किसानों को आर्थिक हानि होती है। यहाँ तक कभी-कभी तो उत्पादकों को उनकी अपनी फसल को मंडी तक ले जाने का किराया भी नहीं निकलता, जिससे वे पूरी तरह से तैयार फसल को खेत में ही नष्ट करना उचित समझते हैं। एक आकलन के अनुसार लगभग 7-12 प्रतिशत फल एवं सब्जियों की उपज उपभोक्ताओं तक पहुंचने से पहले ही नष्ट हो जाती है। इससे हजारों करोड़ रुपये का नुकसान होता है, यह स्थिति लगभग पूरे देश में व्याप्त है। ऐसे में खाद्य प्रसंस्करण क्षेत्र किसानों को उचित मूल्य दिलवाने के साथ-साथ फल एवं सब्जियों के नुकसान को कम करता है व देश की आर्थिक प्रगति में योगदान करता है।

जैसे-जैसे उपभोक्ताओं की मांग में बदलाव हो रहा है, प्रसंस्करित खाद्य उत्पादों का बाजार बढ़ रहा है। ऐसे में प्रसंस्करण उद्योग की भूमिका निरंतर बढ़ती जा रही है। इस क्षेत्र के विकास के लिए भारतीय उपभोक्ताओं की पसंद, बदलते स्वाद के साथ-साथ पारम्परिक उत्पादों को नए एवं विविध रूप देने की आवश्यकता होगी, विदेशी और भारतीय व्यंजनों के मिश्रित उत्पाद भी अधिक लोकप्रिय साबित होंगे। यहाँ ध्यान देने योग्य बात है कि भारत में बहुत बड़ी मात्रा में विदेशों से प्रसंस्करित खाद्य उत्पाद आयात किए जाते हैं। इस क्षेत्र में कारोबारी निवेश द्वारा बहुमूल्य विदेशी मुद्रा की बचत की जा सकती है तथा महिलाओं के लिए रोजगार की अपार संभावनाएं सृजित की जा सकती हैं। इसके साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों में सूक्ष्म-कुटीर एवं लघु प्रसंस्करण इकाइयां स्थापित करके गांव के लोगों का शहर की तरफ पलायन रोका जा सकता है।

महिला उद्यमियों को लाभ

- प्रसंस्करण के माध्यम से महिलाओं को स्वरोजगार की प्राप्ति होती है, जिससे उनका आर्थिक सशक्तिकरण होता है।
- बाजार में उत्पाद को कम दाम में बेचने से राहत मिलती है।
- उत्पाद की मूल्यवर्धन क्षमता में वृद्धि होने से बाजार में मूल्य अधिक प्राप्त होता है।
- समूह के माध्यम से कार्य करने में सहायता प्राप्त होती है।

ग्रामीण महिलाओं का आर्थिक उत्थान हुआ संभव

---

[1]विषय विशेषज्ञ (गृह विज्ञान); [2]वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केंद्र, दिल्ली-110073

खाद्य प्रसंस्करण

खाद्य प्रसंस्करण द्वारा प्राथमिक कृषि उपज जैसे अनाज, फल-सब्जी इत्यादि को विभिन्न उपचारों द्वारा अथवा अन्य रूप से संरक्षित करके स्वाद में वृद्धि कर मूल्य संवर्धित किया जाता है। ऐसे उत्पादों की पौष्टिकता एवं खाद्य सुरक्षा बरकरार रहती है, तथा इन्हें लंबे समय तक भंडारित भी किया जा सकता है। प्रसंस्करित उत्पादों की बढ़ती लोकप्रियता के निम्न कारण हैं:-

- युवाओं की पसंद
- बढ़ता शहरीकरण
- आय में वृद्धि
- उपभोक्ता की बढ़ती सम्पन्नता एवं जीवन शैली में बदलाव
- लोगों की आहार शैली में परिवर्तन
- सुविधाजनक खाद्य (जैसे स्प्रे ड्राइड अथवा फ्रीज ड्राइड उत्पाद, जूस कंसन्ट्रेट, रिकंस्टीटूटेड फल तथा सेल्फ कुकिंग) आहार आदि की बढ़ती मांग
- सुपरमार्केट्स का विकास

केवीके द्वारा खाद्य प्रसंस्करण पर प्रशिक्षण

प्रसंस्करण में महिला उद्यमियों की भूमिका

खेतों से प्राप्त उत्पादों में फल एवं सब्जियों का अग्रणी स्थान है। ये दोनों ही ऐसे उत्पाद हैं, जिनका मूल्य बाजार में बढ़ता-घटता रहता है। इसके साथ ही इनकी निर्धारित आयु कम होती है अर्थात ये शीघ्र ही खराब हो जाते हैं।

खाद्य उत्पादों की जल्द ही खराब होने की प्रवृत्ति के कारण इन्हें कम मूल्य पर भी बेचने की स्थिति किसानों के समक्ष आ जाती है। ऐसी स्थिति में कृषक महिलाओं को कई बार घाटे का सौदा करना पड़ता है। इससे बचने के लिए कृषक महिलाएं खाद्य प्रसंस्करण की तकनीकों को अपना सकती हैं। इससे फल एवं सब्जियों के टिकाऊ बने रहने के साथ उनके स्वाद एवं मूल्य में भी वृद्धि होती है। इसके साथ ही वर्षभर उपभोक्ताओं को इन प्रसंस्करित उत्पादों का स्वाद नियमित रूप से मिलता रहता है।

डिब्बाबंद अचार व आंवला मुरब्बा

महिलाओं को रोजगार

प्रसंस्करित उत्पादों से महिलाओं के रोजगार की संभावनाओं में सतत वृद्धि हो रही है। महिलाएं ग्रामीण हों या शहरी क्षेत्र की वे अपने अन्य कार्यों के साथ कुछ समय निकालकर प्रसंस्करित उत्पादों को तैयार करने का कार्य कर रही हैं। इस प्रकार रोजगार के नए साधन सृजित हो रहे हैं। ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों में महिलाएं अनाजों, मसालों, फल एवं सब्जियों के प्रसंस्करण के क्षेत्र में रोजगार स्थापित कर रही हैं।

खाद्य प्रसंस्करण के क्षेत्र

- फल एवं सब्जियां
- अनाज एवं दालें
- मसाले
- दूध
- ग्रेडिंग एवं पैकिंग

वर्तमान समय में बाजार प्रसंस्करित उत्पादों पर बढ़ता जा रहा है। समय की कमी एवं बढ़ती हुई खाद्य उत्पादों की मांग के आधार पर महिलाओं द्वारा बाजार में खाद्य प्रसंस्करण से तैयार उत्पादों की मांग अधिक है। बाजार की मांग के अनुसार महिलाएं फल-सब्जी से बने विभिन्न प्रसंस्करित उत्पाद जैसे अचार, चटनी, जैम, जेली, स्वास्थ्यवर्धक पेय, मुरब्बा, कैंडी, फ्रूट स्प्रेड, सूखे फल-सब्जियां, अनाज एवं दालों के प्रसंस्करित उत्पाद जैसे दाल, बेसन, मल्टीग्रैन आटा, नूडल्स, पास्ता केक, कुकीज एवं बिस्कुट आदि तैयार कर सकती हैं। हमारे देश के सुझाव पर संयुक्त राष्ट्र द्वारा वर्ष 2023 को अंतर्राष्ट्रीय पोषक अनाज (मिलेट्स) वर्ष घोषित किया गया है। इस सन्दर्भ में श्रीअन्न आधारित मूल्यवर्धित उत्पादों की भी अपार संभावनाएं । इनमें ज्वार, बाजरा, रागी से तैयार आटा, दलिया, सूजी, नूडल्स, पास्ता, शिशु आहार एवं पैकेज केक, कुकीज आदि उत्पाद महिलाएं तैयार करके आसानी से बाजार में बेच सकती हैं। ■

कृषि विज्ञान केन्द्र की भूमिका

देश के विभिन्न हिस्सों में स्थित कृषि विज्ञान केन्द्रों द्वारा कृषक महिलाओं के आर्थिक व सामाजिक सशक्तिकरण के लिए विभिन्न प्रयास किये जा रहे हैं। इनमें से खाद्य प्रसंस्करण क्षेत्र एक विकल्प के रूप में उभरा है। वर्तमान में खाद्य प्रसंस्करण देश के प्रमुख उद्योगों में से एक है जो देश को सफलता की ओर अग्रसर कर रहा है। कृषि विज्ञान केंद्र द्वारा महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए खाद्य प्रसंस्करण आधारित विभिन्न प्रायोगिक प्रशिक्षण देकर सम्बंधित क्षेत्र में कार्य करने के लिए उनका मार्ग प्रशस्त कर रहा है। इसी श्रृंखला में कृषि विज्ञान केन्द्र, दिल्ली में स्थित खाद्य प्रसंस्करण प्रशिक्षण इकाई महिलाओं और युवाओं को कृषि के लिए आकर्षित करने तथा उन्हें कृषि में बनाये रखने के माध्यम से फल, सब्जियों एवं अनाज के प्रसंस्करण पर आधारित प्रशिक्षण आयोजित करता है। इस दौरान प्रशिक्षणार्थियों को विभिन्न प्रसंस्करित उत्पादों को तैयार करने के लिए प्रायोगिक ज्ञान एवं उत्पादों की बाजार मांग से लेकर पैकेजिंग तक से जुड़े सम्पूर्ण प्रशिक्षण एवं इसके साथ ही समूह के माध्यम से कृषक महिलाओं को जोड़कर व्यवसाय करने की सलाह व सहयोग दिया जाता है।

भंगजीरा का औषधीय महत्व

विपिन सती[1] और **दुर्गेश पन्त**[2]

उत्तराखण्ड जो अपनी जैव-विविधता, प्राकृतिक संपदा और पारंपरिक खेती के लिए प्रसिद्ध है, हिमालयी क्षेत्र में पाए जाने वाले कई प्रकार की औषधियों और पोषणयुक्त पौधों का भण्डार है। इन्हीं पौधों में से एक है भंगजीरा जिसे स्थानीय भाषा में भंगजीरा या भोजंग के नाम से भी जाना जाता है। यह पौधा उत्तराखण्ड के ग्रामीण और पर्वतीय क्षेत्रों में उगाया जाता है और इसके बीजों और पत्तियों का उपयोग विभिन्न औषधियों और प्रायोजनों के लिए किया जाता है। भंगजीरा न केवल उत्तराखण्ड की पारंपरिक संस्कृति और खानपान का हिस्सा है बल्कि इसके औषधिय गुण भी इसे अत्यधिक महत्वपूर्ण बनाते हैं। इसके बीजों से प्राप्त होने वाला तेल ओमेगा-3 और ओमेगा-6 जैसे आवश्यक फैटी एसिड से भरपूर होता है, जो स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद है। यह पौधा न केवल स्थानीय लोगों के लिए एक महत्वपूर्ण पोषण स्रोत है, बल्कि इसकी खेती और उपयोग के कई आर्थिक, पर्यावरणीय और सामाजिक लाभ भी हैं। भंगजीरा के बीज और पत्तियां कई आवश्यक पोषक तत्वों से भरपूर होती हैं। इसमें ओमेगा-3 और ओमेगा-6 फैटी एसिड की उच्च मात्रा होती है जो हृदय स्वास्थ्य के लिए अत्यधिक लाभकारी है। हिमालयी क्षेत्र में मछली तेल की कमी के चलते भंगजीरा तेल एक सस्ते और उपलब्ध विकल्प के रूप में उभरा है। यह हृदय रोगों और गठिया, सूजन जैसी समस्याओं की रोकथाम में मददगार है। भंगजीरा के पौधों से एक अलग ही खुशबू भी आती है। इसके अलावा भंगजीरा का तेल कैंसर और अन्य गंभीर रोगों में भी लाभकारी माना जाता है।

उत्तराखण्ड का अधिकतर हिस्सा पहाड़ी है जहां परंपरागत खेती कठिन है। भंगजीरा की खेती पहाड़ी क्षेत्रों में आसानी से की जा सकती है, क्योंकि इसे कम जल की आवश्यकता होती है और यह प्रतिकूल मौसम में भी पनप सकता है। स्थानीय कुटीर उद्योगों मे भी भंगजीरा का उपयोग बढ़ाया जा सकता है, इससे ग्रामीण क्षेत्र की अर्थव्यवस्था को मजबूती मिल सकती है।

भंगजीरा की खेती पर्यावरण की दृष्टि से भी लाभकारी है। यह पौधा पहाड़ी ढलानों पर आसानी से उगता है और मृदा अपरदन को रोकने में मदद करता है। उत्तराखण्ड के पारिस्थितिक तंत्र के संरक्षण में भंगजीरा की खेती महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है, क्योंकि यह मिट्टी की उर्वरता को बनाए रखता है और जल संचयन में भी मदद करता है। इस तरह यह पौधा पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने में सहायक होता है। इसके साथ ही भंगजीरा की खेती से रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के उपयोग में कमी आ सकती है, जो पर्यावरणीय दृष्टिकोण से एक सकारात्मक कदम है।

उत्तराखण्ड एक प्रमुख पर्यटन स्थल है और यहां आने वाले पर्यटक अक्सर स्थानीय उत्पादों की ओर आकर्षित होते है। भंगजीरा जैसे पारंपरिक पौधों और उनके उत्पादों का प्रचार पर्यटन उद्योगों में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। स्थानीय हाट बाजारों, कुटीर

[1]उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद (यू-कॉस्ट), देहरादून; [2]सूचना एवं प्रौद्योगिकी विभाग, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, विज्ञान धाम झांजरा, देहरादून

व्यावसायिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण

यह पौधा न केवल स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद है बल्कि आर्थिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण हो सकता है यदि सरकार दवा कंपनियों को इस दिशा में पहल करने को निर्देश दे तो भंगजीरे की खेती से व्यावसायिक रोजगार के बेहतर अवसर प्राप्त हो सकते हैं। भंगजीरा के व्यावसायिक उत्पादन को बढ़ावा मिलेगा जिससे किसानों को भी फायदा होगा। भंगजीरा का तेल पूरी तरह शाकाहारी है और इसमें वे सभी तत्व है जो कॉड लीवर ऑयल में पाए जाते हैं। जो लोग मांसाहार नहीं करते वे भंगजीरा के तेल का उपयोग कर सकते हैं। भंगजीरा का प्रयोग कॉड लीवर ऑयल की तुलना में अधिक सुरक्षित है, क्योंकि इसमें तेलों से हानिकारक तत्व जैसे पारा आदि के मानव शरीर में पहुंचने की आशंका नहीं होती। इस प्रकार यह पूरी तरह शाकाहारी और लाभकारी है। सरकार ने भंगजीरा के व्यावसायिक उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए कदम उठाए हैं। अंतः भंगजीरा एक महत्वपूर्ण औषधीय पौधा है, जिसे उत्तराखण्ड में विशेष रूप से उगाया जाता है। इसके कई स्वास्थ्य लाभ हैं सरकार की पहल और वैज्ञानिकों के अनुसंधान से यह संभावना बढ़ी है कि भंगजीरा का व्यावसायिक उत्पादन बड़े पैमाने पर किया जा सकेगा जिससे आम जन को लाभ मिलेगा। इस दिशा में उठाए गए कदम न केवल स्वास्थ्य के लिए बल्कि आर्थिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण सिद्ध होगें। भंगजीरा उत्तराखण्ड ही नहीं बल्कि विदेशों के लिए भी गुणकारी एवं बहुत उपयोगी है।

भंगजीरा चटनी

सामग्री

- भंगजीरा के बीज – 50 ग्राम
- जीरा – 3 ग्राम
- अनारदाना – स्वादानुसार
- नमक और गुड़ – स्वादानुसार
- साबुत लाल मिर्च – 3

विधि

- भंगजीरा के बीज और जीरे को अलग-अलग भून लें।
- लाल मिर्च, जीरा, अनारदाना और भंगजीरा के बीजों में थोड़ा पानी डालकर बारीक पीस लें।
- स्वादानुसार नमक डालें और सर्व करें।

उद्योगों और अन्य विक्रय माध्यमों द्वारा भंगजीरा और इससे बने उत्पादों को पर्यटकों के बीच लोकप्रिय बनाया जा सकता है। विशेष रूप से भंगजीरा से बनने वाली चटनी और अन्य खाद्य उत्पाद पर्यटकों के लिए एक विशेष आकर्षण हो सकते हैं।

भंगजीरा तेल और अन्य औषधीय उत्पादों एवं स्थानीय उत्पादों को राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पहचान दे सकता है जिससे उत्तराखण्ड के ग्रामीण इलाकों में आर्थिक समृद्धि आएगी।

भंगजीरा औषधीय और पोषण से भरपूर

भंगजीरा एक सुगंधित बीज है जो मसाले के रूप में और स्वादिष्ट चटनी बनाने के लिए इस्तेमाल किया जाता है। इसके बीज से निकाला गया तेल खाना पकाने और औषधीय उपयोग के लिए उपयोगी होता है। उत्तराखण्ड के लोग हिमालय के ऊपरी क्षेत्रों में उगाए जाने वाले इस पौधों के पत्तों और बीजों का विभिन्न तरीकों से उपयोग करते हैं। और इन मछली के कॉड लीवर ऑयल से बेहतर विकल्प बनाते हैं।

भंगजीरा के बीजों में पॉलीअनसैचुरेटेड फैटी एसिड होता है जो स्वास्थ्य के लिए बेहद लाभकारी है। इसके बीज छोटे होते हैं और इसका वजन लगभग 4 ग्राम होता है। अन्य पौधों के तेलों की तुलना में भंगजीरा का तेल ओमेगा-3 फैटी एसिड की सबसे अधिक मात्रा में पाया जाता है जो 54-64% तक हो सकता है। इसके अलावा लगभग 14% ओमेगा-6 लिनोलिक एसिड और ओमेगा-9 ओलिक एसिड भी मौजूद होते हैं। ये फैटी एसिड हृदय रोग, कैंसर, सूजन और गठिया जैसे रोगों की रोकथाम में सहायक होते हैं। भंगजीरा के सुगंधित बीजों का उपयोग मसाले के रूप में और चटनी बनाने में किया जाता है।

भुने हुए भंगजीरा के बीजों को भुने हुए कोदो मिलेट प्रोसो मिलेट के साथ मिलाकर पीलिया और चेचक जैसे रोगों से ग्रसित लोगों के लिए पौष्टिक आहार के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। स्वाद में भी यह अलसी के बीजों की तुलना में अधिक स्वादिष्ट होता है और इसमें अतिरिक्त ओमेगा फैटी एसिड की मात्रा होती है जो इसे पोषण के साथ-साथ स्वाद के लिहाज से भी एक बेहतर विकल्प बनाता है।

भंगजीरा उत्तराखण्ड के लोगों के लिए एक बहुमूल्य पौधा है, जो स्वास्थ्य, पोषण आर्थिक विकास और पर्यावरणीय संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसके पोषक गुण, विशेष रूप से ओमेगा-3 और ओमेगा-6 फैटी एसिड इसे एक उत्कृष्ट स्वास्थ्य पूरक बनाते हैं। इसके अलावा इसकी खेती और उत्पादों का विपणन ग्रामीण आजीविका को बेहतर बना सकता है। उत्तराखण्ड में भंगजीरा की खेती न केवल पर्यावरणीय दृष्टि से फायदेमंद है बल्कि यह राज्य की सांस्कृतिक धरोहर को संरक्षित रखने और सतत विकास में भी योगदान देती है। ■

वैज्ञानिक अनुसंधान और नवाचार

उत्तराखण्ड के वैज्ञानिक संस्थान जैसे कि सुगंधित पौधों के केंद्र ए भंगजीरा पर शोध कर रहे है। इन्होंनें शोध में पाया कि इस पौधों में ओमेगा-3 फैटी एसिड प्रचुर मात्रा में होते हैं जो स्वास्थ्य के लिए लाभकारी रहे हैं। वैज्ञानिक अनुसंधान के जरिए भंगजीरा की खेती उत्पादन और औषधीय उपयोग के नए तरीके खोजे जा रहे हैं, जिससे यह पौधा और भी अधिक लाभकारी हो सकता है, जैसे कि जैविक तेल स्वास्थ्य पूरक और सौंदर्य प्रसाधन आदि। इन नवाचारों से उत्तराखण्ड की अर्थव्यवस्था को बढ़ावा मिलेगा और नए रोजगार के अवसर प्राप्त होंगे। भंगजीरा उत्तराखण्ड की पारंपरिक कृषि और खानपान का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। इसका उपयोग पीढ़ियों से पारंपरिक चिकित्सा और आहार में किया जा रहा है। इसके बीजों से बनाई गई चटनी और अन्य व्यंजन स्थानीय पर्वतीय क्षेत्रों के लोगों के जीवन का एक अभिन्न हिस्सा है। इस पौधे से अच्छी सुगंध भी आती है, यह पौधा शरीर में भरपूर पोषण प्रदान करता है। इस पौधे की पत्तियां बड़ी ही कोमल और मुलायम होती हैं। यह पौधा बहुत सुंदर दिखता है और यह सांस्कृतिक रूप से भी महत्वपूर्ण है।

उपयोगी

औषधीय गुणों से भरपूर बेल

देवेन्द्र पाण्डेय[1], संजय कुमार सिंह[2], शिव पूजन[3], शारदुल्य शुक्ला[4] और आश्चर्य पाण्डेय[5]

बेल रूटेसी परिवार से संबंधित भारतीय मूल का एक घरेलू औषधीय पौधा है। बेल को भारत में गोल्डन एप्पल और स्टोन एप्पल एवं 'श्री फल' के नाम से भी जाना जाता है। बेल का वर्णन प्राचीन भारतीय साहित्य, वेदों, रामायण व बृहत संहिता जैसे ग्रंथों में किया गया है। प्राचीन भारतीय साहित्य में बेल को एक पूज्य वृक्ष का दर्जा प्राप्त है। बेल की पत्ती वानस्पतिक दृष्टि से त्रिपर्णीय होती है। भारत के विभिन्न भागों में बेल के फल लगभग मई से अगस्त महीने तक उपलब्ध रहते हैं। एक नये आँकड़े के अनुसार देश में बेल का क्षेत्रफल लगभग 1,000 हैक्टर, कुल उत्पादन 10,000 टन तथा औसत उत्पादन 10-15 टन प्रति हैक्टर है। भारत में इसका व्यावसायिक उत्पादन मुख्यता उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखण्ड, मध्यप्रदेश, पश्चिम बंगाल, ओडिशा, छत्तीसगढ़ और राजस्थान में होता है।

भारत के 329 मिलियन हैक्टर भौगोलिक क्षेत्र का 173 मिलियन हैक्टर क्षेत्र बंजर है। इन क्षेत्रों में बेल की खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। बेल, मृदा में पीएच मान (5-10), ईसी (9 ds/m) और ईएसपी (30) तक सफलतापूर्वक सहन कर सकती है अतः ऐसे क्षेत्रों में बेल की खेती करके अधिक लाभ कमाया जा सकता हैं। इसकी पत्तों के गिरने एवं भूमि में सड़ने के उपरान्त मृदा की दशा में भी सुधार हो सकता है।

[1,2,3,4]केंद्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, रहमानखेड़ा, डाकघर-काकोरी, लखनऊ-226101; [5]सैम हिगिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी और विज्ञान विश्वविद्यालय, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश

सौंदर्य प्रसाधन उद्योग में उपयोग

पके हुए बेल के गूदे को पानी या नारियल के तेल के साथ मिलाकर बालों में शैम्पू के रूप में प्रयोग किया जाता है। इसके अलावा कई अन्य उत्पादों को बनाने की आवश्यकता है जिसकी विदेशी बाजारों में अधिक मांग है।

प्रसंस्करण उद्योग में बेल

बेल के फलों का प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन में अपार संभावनाये हैं। बेल से निर्मित पौष्टिक एवं स्वास्थ्यवर्धक उत्पादों जैसे स्क्वैश, रेडी टू सर्व, जैम, कैंडी, मुरब्बा, टॉफी एवं सिरप आदि की घरेलू और निर्यात बाजारों में माँग धीरे-धीरे बढ़ रही है। बीजों के साथ लगे गोंद का प्रयोग आसंजक (एडहेसिव), जलरोधक एवं परत पायस (इमल्सन) के रूप में किया जाता है।

बेल से अतिरिक्त आय

बेल गहरी जड़ों वाला पर्णपाती एवं त्रिपर्णी पत्तियों वाला वृक्ष है, जो सहफसली खेती हेतु सर्वथा उपयुक्त है। अतः किसान बेल के साथ सहफसल जैसे- मटर, लोबिया, मूँग, बैंगन, टमाटर, धनिया इत्यादि लेकर अच्छी आय प्राप्त कर सकते हैं।

सरल प्रवर्धन

उत्तर भारत में बेल का व्यावसायिक प्रवर्धन पैच बडिंग विधि द्वारा किया जाता है। इस विधि के लिए मध्य मई से लेकर जुलाई तक का समय सर्वोत्तम माना जाता है, जबकि नियंत्रित दशाओं (पॉली/शेड नेट) में साल के 8-10 महीनों में वेज या जीह्वा ग्राफ्टिंग द्वारा सफलतापूर्वक प्रवर्धन किया जा सकता है। अतः इसके सरल प्रवर्धन से तेजी से अधिक पौधे तैयार कर इसकी आपूर्ति की जा सकती है।

अधिक आय वाली फसल

बेल अधिक आय देने वाली फसल है। इसकी बागवानी से प्रति हैक्टर क्षेत्र से लगभग 100-150 क्विंटल तक उपज प्राप्त होती है और लगभग 80,000-1,00,000 रुपये तक का शुद्ध लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

निर्यात की संभावनाएं

विश्व में बेल का उपयोग औषधि निर्माण, सौन्दर्य प्रसाधन एवं संसाधित उत्पाद निर्माण इकाइयों में लगातार बढ़ने के कारण

औषधीय उपयोग

बेल में विटामिन बी-2 (राइबोफ्लेविन), विटामिन सी, बीटा-कैरोटिन व मार्मेलोसिन नामक सक्रिय अवयव अधिक मात्रा में पाये जाते हैं। अध्ययनों से यह ज्ञात हुआ है कि बेल में मौजूद मार्मेलोसिन एवं सोरोलिन के रूप में प्रबल एंटीऑक्सीडेंट गुण होते हैं। यह रोगों से लड़ने की क्षमता प्रदान करता है। इसके सेवन से कई प्रकार के विकार जैसे पेचिश, अपच, खराब अवशोषण, तांत्रिका संबंधी रोगों, एडिमा, कैंसर, मधुमेह, उल्टी और गठिया के इलाज के लिए किया जाता है। शिशुओं और 3 वर्ष से कम आयु के बच्चों के आहार में बेल के फलों को देने से दाँत निकलते समय होने वाली समस्याओं को भी दूर किया जा सकता है।

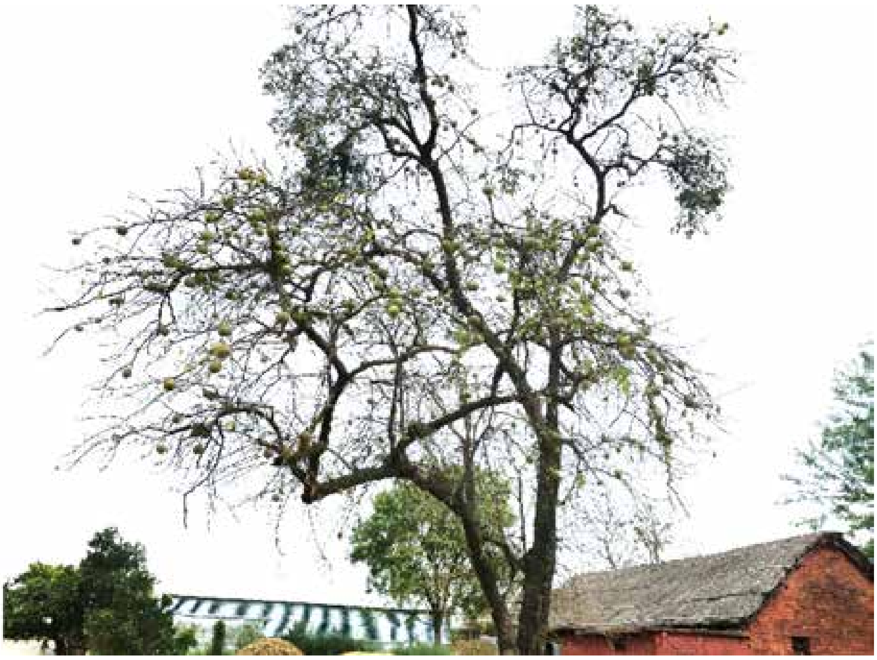

वृक्ष से लदे बेल फल

उन्नत किस्में

भाकृअनुप-केंद्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ द्वारा सीआईएसएच बेल-1, सीआईएसएच बेल-2 और सीआईएसएच बेल-3;

- आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, अयोध्या द्वारा नरेन्द्र बेल-5, नरेन्द्र बेल-7, नरेन्द्र बेल-9, नरेन्द्र बेल-16 एवं नरेन्द्र बेल-17;
- केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर का क्षेत्रीय अनुसन्धान केंद्र, गोधरा (गुजरात) ने गोमा यशी, थार दिव्या, थार नीलकंठ एवं थार सृष्टि;
- गोविन्द वल्लभ पन्त कृषि विश्वविद्यालय, पन्तनगर (उत्तराखंड) द्वारा पन्त अपर्णा, पन्त उर्वशी, पन्त सुजाता एवं पन्त शिवान आदि किस्में विकसित की हैं।

इसके निर्यात की असीम संभावनाएँ हैं। आज आवश्यकता इस बात कि है कि इसके गुणों का वैश्विक बाजार में अधिक से अधिक प्रचार-प्रसार किया जाय।

अधिक उत्पादन हेतु उन्नत कृषि क्रियाएं

सामान्य तौर पर एक वर्ष पुराने पौधे में 5 किलोग्राम गोबर की सड़ी खाद के साथ 50 ग्राम नाइट्रोजन, 25 ग्राम फॉस्फोरस एवं 50 ग्राम पोटेशियम डालते हैं। खाद और उर्वरकों की यह मात्रा पौधों के गुणांक में 10 वर्ष तक इसी अनुपात में बढ़ाते रहते हैं। इस प्रकार 10 वर्ष या इससे अधिक उम्र के पौधों में 50 किलोग्राम गोबर की खाद, 500 ग्राम नाइट्रोजन, 250 ग्राम फॉस्फोरस एवं 500 ग्राम पोटेशियम डालते हैं। खाद की यह मात्रा जुलाई के महीने में वृक्षों को दी जानी चाहिये।

बेल के फलों का फटना और गिरना एक गंभीर विकार है। फल फटने की समस्या शुष्क दशाओं में अधिक देखी जाती है। फल गिरने की समस्या अगस्त-सितंबर या जाड़े के मौसम में अधिक होती है। इन समस्याओं से निदान पाने के लिए बोरेक्स मृदा में (100 ग्राम प्रति वृक्ष) या पौधों पर छिड़काव (0.1 प्रतिशत) करने से काफी हद तक नियंत्रित किया जा सकता है। फलों को झुलसने से रोकने हेतु बैगिंग करना उचित पाया गया है।

नये रोपित वृक्षों एवं पुराने वृक्षों में पर्ण सुरंगी एवं पर्णभक्षी कीट नुकसान पहुंचाते हैं। ये वृक्ष की पत्तियों को काटकर नुकसान पहुँचाते हैं। इन कीटों के रोगथाम हेतु रोगार (1 ग्राम/लीटर) या थायोडान (1 ग्राम/

सारणी 1: बेल के प्रमुख भागों की उपयोगिता

प्रमुख भाग	उपयोग
पत्ती	इसके पत्ते बुखार, उल्टी, सूजन, पेचिश, अपच, वीर्य की कमजोरी और आंतरिक बुखार के इलाज में अधिक प्रभावी हैं।
जड़	बेल की जड़ें मूत्र संबंधी समस्याओं के उपचार, बुखार को ठीक करने में अच्छी मानी जाती हैं। ऐसा कहा जाता है कि ये पेट दर्द से भी राहत दिलाती हैं। दशमूल के औषधीय गुण इसकी जड़ में मौजूद हैं जो बुखार, दस्त और पेट फूलने के इलाज में कारगर हैं।
फूल	फूलों को आसवित करके पेचिश रोधी, मधुमेह रोधी और स्थानीय संवेदनाहारी दवा बनाई जा सकती है। इसका उपभोग पेट और आंत के लिए टॉनिक के रूप में किया जाता है। कफ निस्सारक के रूप में इस्तेमाल होने के साथ-साथ यह मिर्गी में भी सहायक होता है।
फल	बेल के फल खाने योग्य होते हैं। इसके गूदे का उपयोग जूस, जैम, पाउडर, कैंडी और मुरब्बा जैसे स्वादिष्ट उत्पाद बनाने में किया जाता है। रेचक के रूप में इस्तेमाल और श्वसन संबंधी रोगों को ठीक करने के अलावा, इसका उपयोग कई पारंपरिक दवाओं में भी किया जाता है, जैसे क्रोनिक डायरिया, पेप्टिक अल्सर, लिपिड पेरोक्सीडेशन को रोकना, फ्री-रेडिकल्स को नष्ट करना, एंटीऑक्सीडेंट, एंटी-अल्सरेटिव कोलाइटिस, गैस्ट्रोप्रोटेक्टिव, हेपेटोप्रोटेक्टिव, एंटीडायबिटिक, कार्डियोप्रोटेक्टिव, रेडियोप्रोटेक्टिव, जीवाणुरोधी, एंटीडायरियल और एंटीवायरल गुण आदि।
बीज	बीज के अर्क में मधुमेह रोधी और हाइपोलिपिडेमिक प्रभाव होता है।

बेल के फलों का गिरना एवं फटना

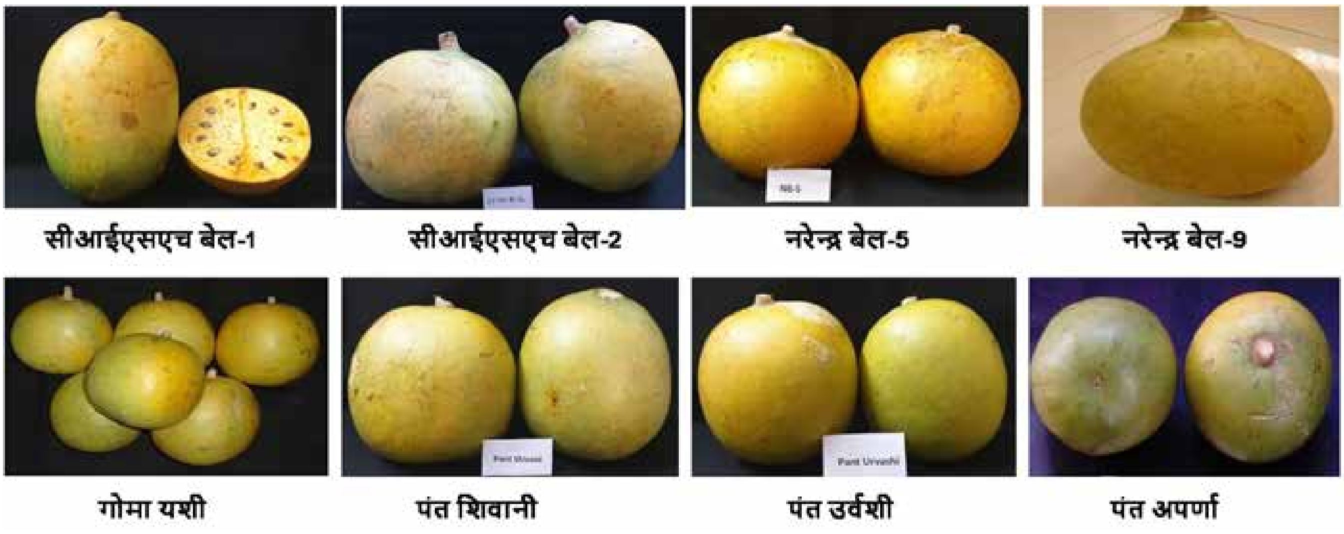

बेल की नई किस्मों का आकार एवं रंग

लीटर) का छिड़काव सप्ताह के अंतराल पर करना चाहिये।

फल गलन (जेन्थोमोनस कैम्पेसट्रिस) प्रभावित पौधे में जलासिक्त, छोटे, गोलाकार धब्बे बनते हैं जिनके किनारों पर पीली धारियाँ होती हैं। इस बीमारी की रोकथाम के लिए 15 दिनों के अंतराल पर स्ट्रेप्टोसाइक्लिन (200 पीपीएम) का छिड़काव करना चाहिए।

फल डंठल सड़न (फ्यूजेरियम सोलेनाई, फ्यूजेरियम सेमीटेक्टम) भी एक फफूंदजनित रोग है जिसके संक्रमण से फलों के डंठलों पर गहरे भूरे घाव बन जाते हैं जिसमें डंठल कमजोर हो जाते हैं और फल गिर जाते हैं। इस रोग की रोकथाम के लिए छोटे फलों पर प्रोपिकानाजोल (1 मिली/लीटर) का 15 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करना चाहिए।

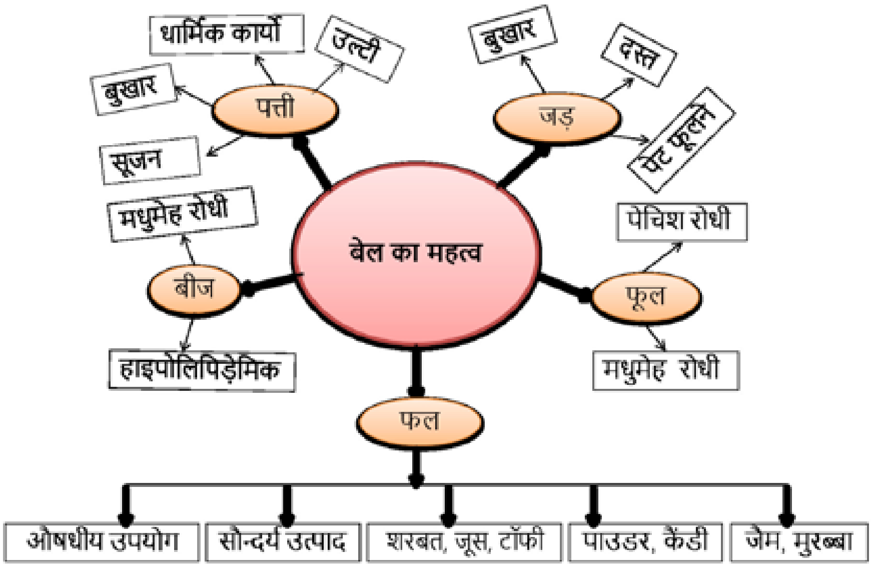

बेल के विभिन्न उपयोगी गुण

सारणी 2: बेल की लोकप्रिय किस्में	
किस्म का नाम	**प्रमुख विशेषता**
सीआईएसएच बेल-1	मध्यम देरी से पकने वाली, पतला छिलका, गहरा पीला गूदा एवं म्युसिलेज की कम मात्रा एवं स्वाद उत्कृष्ट होता है।
सीआईएसएच बेल-2	जल्दी फल देने वाली प्रजाति, फल के गूदे का रंग पीला- नारंगी एवं छिलका पतला होता है। फलों में बीज एवं रेशे की मात्रा कम होती है।
नरेन्द्र बेल-5	वृक्ष में फल जल्दी लगते हैं, फल की आकृति गोल और दोनों शिराओं पर लगभग चिपके होते हैं।
नरेन्द्र बेल-9	पौधे मध्यम ऊंचाई और फैलाव वाले, फलों आकृति में लम्बाकार और चिकनी सतह वाले होते हैं। रेशे की मात्रा मध्यम एवं बहुत मीठे होते हैं।

तुड़ाई उपरांत प्रबंधन

वृक्षों को हिलाकर फल नहीं तोड़े जाने चाहिए। फलों को सावधानीपूर्वक एक-एक करके हाथ से तोड़ना चाहिए। चूँकि तुड़ाई उपरान्त फलों में डंठल सड़न रोग की आशंका रहती है अत: उन्हे लगभग 2 सें.मी. लम्बे डंठल के साथ सिकेटियर के माध्यम से काट कर तोड़ना चाहिए।

बेल से अनेक परिरक्षित पदार्थ बनाये जा सकते हैं जैसे- स्क्वैश, जैम, कैंडी, मुरब्बा एवं सिरप इत्यादि हैं। कई प्रकार की आयुर्वेदिक दवाइयां भी बेल से बनाई जाती हैं। अत: पोषण एवं औषधीय उपयोग हेतु बेल के जैविक उत्पादन को बढ़ावा देने की आवश्यकता है जो स्वास्थ्य के लिए अधिक लाभप्रद होगा। ■

लेखकों से अनुरोध

आज सूचना प्रौद्योगिकी के बदले हुए कदमों को हमारे पाठक और लेखक दोनों ने पहचाना है। पाठकगण लेखकों से सीधी बात कर सकें, इसलिए हम चाहते हैं कि सभी लेखक अपने लेख पोर्टल epatrika.icar.org.in में भेजने के साथ ई-मेल पता तथा मोबाइल नम्बर अवश्य दें।

संपादक

लीची में फुटाव का समाधान

सुनील कुमार, बिकास दास, अशोक धाकड़ और **गणेश कुमार**

लीची की शाही किस्म अपने अनोखे स्वाद एवं विशिष्ट सुगंध के लिए प्रसिद्ध है। जल्दी पकने (अगेती किस्म) एवं अपने उच्च आर्थिक मूल्य के कारण शाही लीची बिहार के बागवानों की प्रमुख व्यावसायिक किस्म है जो दिन-प्रतिदिन लोकप्रिय होती जा रही है। बिहार की शाही लीची को भौगोलिक संकेत (जीआई) मिलने से राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में इसकी मांग बढ़ने लगी है। हालांकि, इसके उत्पादन एवं सतत विकास में फलों के फटने की समस्या एक गंभीर चुनौती है। सामान्य वर्षों में लगभग 10-30% फल फटने लगते हैं जिससे न केवल उपज एवं फलों की गुणवत्ता में कमी आती है, बल्कि किसानों को आर्थिक नुकसान भी होता है। अतः लीची में फलों के फटने की समस्या से बचने के लिए सही नीतियों का अपनाना आवश्यक है। लीची के गुच्छों में बैगिंग (फल लगने के 25-30 दिन बाद), पादप वृद्धि नियामकों (सैलिसिलिक एसिड / 50 पीपीएम) एवं जैव-उत्तेजक (सागरिका तरल / 0.5%) का पर्णीय छिड़काव एवं माइक्रो स्प्रिंकलर के माध्यम से संतुलित जल आपूर्ति करके इस समस्या को प्रभावी ढंग से कम किया जा सकता है।

लीची (*चाईनेंन्सिस सोन.*), सैपिन्डेसी कुल के अंतर्गत, एक उपोष्ण कटिबंधीय सदाबहार लोकप्रिय फल है। यह अपने आकर्षक लाल रंग, अर्ध-पारदर्शी रसदार सफेद एरिल (गूदा), उच्च पोषक तत्वों, विशेष सुगंध एवं स्वादिष्ट गुणों के लिए जानी जाती है। भारत में लीची की खेती लगभग 1 लाख हैक्टर क्षेत्र में होती है जिससे प्रतिवर्ष लगभग 7.3 लाख टन उत्पादन होता है। बिहार, भारत के सबसे बड़े लीची उत्पादक राज्यों में से एक है, जो देश में लीची उत्पादन में 40% से अधिक का योगदान देता है। शाही लीची एक अगेती किस्म है जो अपने अनोखे स्वाद एवं विशिष्ट सुगंध के लिए दुनियाभर में प्रसिद्ध है। हालाँकि, लीची उत्पादकों के सामने आने वाली चुनौतियों में फलों का फटना एक प्रमुख समस्या है जिससे शाही जैसी कुछ अतिसंवेदनशील अगेती किस्मों में 30% तक नुकसान हो जाता है और फल की गुणवत्ता और विपणन क्षमता पर गहरा प्रभाव पड़ता है।

बिहार में लीची के फलों की वृद्धि और विकास अप्रैल-मई के माह में होता है, जिस समय उच्च तापमान और कम आर्द्रता होती है, इसके परिणामस्वरूप फलों की त्वचा पर हल्के भूरे रंग के धब्बे पड़ जाते हैं एवं फल फट जाते हैं। प्रतिकूल जलवायु परिस्थितियों के दौरान जब शुष्क गर्म हवाओं के साथ लगातार शुष्क गर्मी ($40 \pm 2°$ तापमान और $<50\%$ सापेक्षिक आर्द्रता) रहती है, तो फलों के फटने की गंभीर समस्या उत्पन्न होती है। इससे उपज के साथ-साथ लीची के फलों

भाकृअनुप-राष्ट्रीय लीची अनुसंधान केंद्र, मुजफ्फरपुर (बिहार)-842002

गुच्छों में थैलाबंदी (बैगिंग)

लीची के गुच्छों में सफेद रंग के गैर-बुने हुए पॉलीप्रोपाइलीन बैग से थैलाबंदी (बैगिंग) करने से फलों के फटने में सुरक्षा मिलती है और फलों की गुणवत्ता में सुधार होता है। किसान तेज धूप वाले दिनों, जब फलों की सतह पर नमी जमा न हो, में बैगिंग कर सकते हैं। स्वस्थ दिखने वाले गुच्छों को धीरे से थैलियों में डाला जाता है और उनके खुले हिस्से को धागे से ठीक से बांध दिया जाता है। सामान्यत: फल लगने के 25-30 दिनों बाद तथा कीटनाशक दवाओं, प्लानोफिक्स एवं बोरेक्स के पर्णीय छिड़काव होने के बाद लीची के गुच्छों में थैलाबंदी की जाती है। बिहार में लीची की शाही किस्म में थैलाबंदी करने का उचित समय 25-30 अप्रैल तथा फलों की तुड़ाई का समय 25-30 मई होता है।

की गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। जलवायवीय कारकों के अलावा, फलों की शुरुआती वृद्धि के दौरान त्वचा (पेरिकार्प) का असामान्य विकास इस विकार को बढ़ावा देता है।

'बॉल-स्किन बनाम ब्लैडर इफेक्ट' सिद्धांत के अनुसार जब एरिल (गूदा) का विस्तार दबाव पेरिकार्प (त्वचा) की ताकत से अधिक हो जाता है तो फल फटने लगते हैं, विशेष रूप से उच्च तापमान या उच्च वायु आर्द्रता, या अचानक भारी बारिश के बाद से ऐसी पर्यावरणीय स्थितियाँ बनती हैं। इसके लिए, बगीचों में फलों की गुणवत्ता में गिरावट को कम करने के लिए, किसान अपने फलों को नुकसान पहुंचाने वाले विभिन्न कारकों से बचाने के साधन के रूप में कृषि पद्धतियों का एक सेट नियोजित कर सकते हैं। लीची में फलों के फटने की समस्या से बचने के लिए सही नीतियों को अपनाना आवश्यक है।

लीची में झुलसने की समस्या

फलों को फटने से बचाने के लिए प्रबंधन

- **वृक्षों के नीचे माइक्रो स्प्रिंकलर से सिंचाई**

लीची के फलों के पकने के समय लगातार नमी और उचित आर्द्रता की आवश्यकता होती है। मिट्टी की नमी में 30-40% की कमी होने पर सिंचाई करना फलों के फटने को कम करने में काफी सहायक होता है। छत्रक के नीचे माइक्रो स्प्रिंकलर से सिंचाई करने से बागों में नमी एवं आर्द्रता बनी रहती है जिससे फलों के फटने एवं झुलसने में काफी कमी आती है। मिट्टी की नमी को बनाए रखने के लिए ड्रिप सिंचाई का भी प्रयोग कर सकते हैं।

- **पादप वृद्धि नियामकों का छिड़काव**

पादप हार्मोन/वृद्धि नियामक, फलों की सामान्य वृद्धि और विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, और उनके असंतुलन से फलों की वृद्धि और विकास की प्रक्रिया के दौरान फलों के फटने की समस्या हो सकती है। फल लगने के 35-40 दिनों बाद सैलिसिलिक एसिड (50 मिलीग्राम प्रति लीटर) का पर्णीय छिड़काव फलों के फटने को कम करने में फायदेमंद पाया गया है।

- **जैव-उत्तेजकों का प्रयोग**

समुद्री शैवाल के अर्क से बने जैव-उत्तेजक का उपयोग पौधों की वृद्धि, पोषक तत्व समावेशन और तनाव प्रबंधन में सुधार को बढ़ावा देता है। फल लगने के 35-40 दिनों बाद 0.5% (5 मिली. प्रति लीटर) की दर से सागरिका तरल (इफको) का पत्ते पर छिड़काव करने से फलों के फटने एवं झुलसने की समस्या कम हो जाती है।

- **सिंचाई**

लीची के बागों में फूल आने से लेकर फलों तक नमी बनाये रखने की आवश्यकता होती है। बागों में लम्बे समय बाद अचानक एवं उच्च तापमान पर सिंचाई करने से फल फटने लगते है। बूंद-बूंद (ड्रिप) सिंचाई विधि द्वारा प्रतिदिन सिंचाई करने से फलों के फटने की समस्या भी कम होती है।

- **मल्चिंग**

सिंचाई के साथ-साथ मल्चिंग द्वारा जल संरक्षण करना लाभदायक पाया गया है। मिट्टी की नमी को बनाए रखने के लिए लीची के पत्तों से मल्चिंग कर देने से मिट्टी का तापमान नियंत्रित रहता है। पौधे के मुख्य तने के चारों तरफ लीची के पत्तों की अवरोध परत बिछाकर मृदा जल को संरक्षित किया जा सकता है। 100 माइक्रॉन मोटाई की काले रंग की पॉलीथीन से भी मल्चिंग कर नमी को संरक्षित रखा जा सकता है।

- **गति अवरोधक वृक्षों की कतार**

अत्यधिक हवा वाले क्षेत्रों में फलों को फटने से बचाने के लिए उत्तर-पश्चिम दिशा में गति अवरोधक वृक्षों की कतार लगानी चाहिए।

फल फुटाव से ग्रसित लीची

उचित प्रबंधन जरूरी

लीची में फलों का फटना एक जटिल विकार है जो विशेष रूप से शाही लीची की गुणवत्ता और विपणन क्षमता को प्रभावित करता है। इस समस्या को प्रभावी ढंग से नियंत्रित करने के लिए किसान विभिन्न उपायों को अपनाकर फसल की गुणवत्ता और उत्पादन को बढ़ा सकते हैं। इसके अलावा, उचित बाग प्रबंधन और पोषक तत्वों के विवेकपूर्ण उपयोग से बागों में फलों के फटने को कम किया जा सकता है।

पोषक तत्व प्रबंधन

फल लगने के 25-30 दिनों बाद कैल्शियम क्लोराइड (4-5 ग्राम प्रति लीटर) एवं बोरेक्स (4 ग्राम प्रति लीटर) छिड़काव करें एवं 15 दिनों के अंतराल के बाद बोरेक्स के छिड़काव को दोहराकर फलों के फटने को कम किया जा सकता है। ■

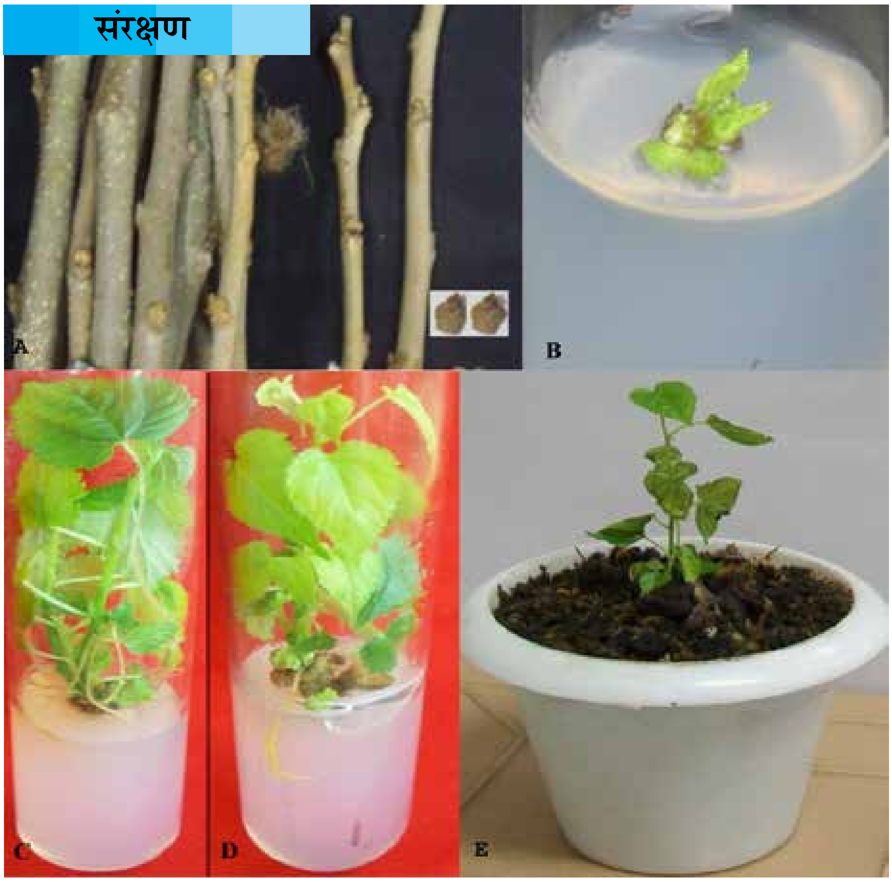

सुषुप्त कलियों का हिम परिरक्षण

रविश चौधरी[1] और **एस. के. मलिक**[2]

परम्परागत रूप से रूढ़िवादी बीजों वाले फसल जर्मप्लाज्म का बाह्य स्थान संरक्षण, नमी की मात्रा को कम करके और शून्य से कम तापमान (आमतौर पर –20° सेल्सियस) पर भंडारण के माध्यम से बीज जीन बैंक में संरक्षण किया जाता है। हालांकि, कई आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण पौधों की प्रजातियां बीज (सूखापन और ठंड के प्रति संवेदनशील) का उत्पादन करती हैं या मुख्य रूप से वानस्पतिक रूप से उगाई जाती हैं। इस प्रकार इन समूहों के जर्मप्लाज्म का संरक्षण गंभीर समस्याएँ उत्पन्न करता है। पौधों के प्रजनकों में नमी की मात्रा अधिक होने की स्थिति के कारण वानस्पतिक रूप से प्रचारित प्रजातियों का संरक्षण बीज जीनबैंक में संभव नहीं है। वैकल्पिक रूप से, इन समूहों के जर्मप्लाज्म को क्लोनल रिपोजिटरी/फील्ड जीनबैंक में बनाए रखा जा सकता है। इन समूहों के जर्मप्लाज्म का खेत में संरक्षण जोखिम भरा होता है, क्योंकि कीटों, रोगों, प्रतिकूल मौसम की स्थिति के कारण मूल्यवान जर्मप्लाज्म का नुकसान हो सकता है। इसके अलावा इन समूहों के जर्मप्लाज्म के संग्रहण का रखरखाव श्रमसाध्य और महंगा भी होता है।

जैव प्रौद्योगिकी में प्रगति ने आनुवंशिक संसाधनों के संरक्षण और क्रायोजेनिक तापमान (क्रायोप्रिजर्वेशन) पर पौधों की सामग्री के उपयोग और रखरखाव के लिए नए अवसर उत्पन्न किए हैं, जो अब दीर्घकालिक भंडारण के लिए एक उपयुक्त विकल्प हैं। इसी तरह अपने विशिष्ट लाभों के साथ ऊतक संवर्धन का उपयोग अल्पकालिक संरक्षण के लिए भी किया जाता है लेकिन यह दीर्घकालिक संरक्षण के लिए काम नहीं करता है। दीर्घकालिक संरक्षण के लिए क्रायोप्रिजर्वेशन केवल आर्थिक और व्यवहार्य रूप से अपनाया जाने वाला तरीका है। इस प्रकार, क्रायोप्रिजर्वेशन केवल सीमित स्थान की आवश्यकता और संदूषण से सामग्री की रक्षा करने के अलावा बादाम, शहतूत और अखरोट जैसे महत्वपूर्ण जर्मप्लाज्म की आनुवंशिक स्थिरता को भी सुनिश्चित करता है।

उत्तर-पश्चिमी हिमालयी राज्यों में समशीतोष्ण फल और अखरोट की खेती सदियों से की जा रही है और अधिकांश रोपण ऐसे क्षेत्रों में उगाए जाते हैं जहां बहुत कम उत्पादकता होती है। इन वनस्पतियों की सुषुप्त कलियों के दीर्घकालिक संग्रहण के लिए क्रायोप्रिजर्वेशन अन्य विकल्पों में सबसे आगे है क्योंकि यह सरल, सस्ता और विश्वसनीय तरीका है। इससे जर्मप्लाज्म की क्लोनल अखंडता को बनाए रखा जाता है और ग्राफ्टेड वृक्षों को जल्दी फलने के लिए तैयार किया जा सकता है। क्रायोजेनिक तापमान पर, कोशिका विभाजन और सभी चयापचय गतिविधियां अपरिवर्तित रहती हैं, जिससे किसी भी आनुवंशिक परिवर्तन की आशंका कम हो जाती है।

जैविक सामग्री के लिए क्रायोप्रिजर्वेशन की तकनीकों को अपनाना, तकनीकी व्यवहार्यता और संरक्षण प्रक्रिया और लागत और लाभों के बीच संबंध पर निर्भर करता है। वानस्पतिक रूप से प्रचारित पौधों को बनाए रखने के लिए विशेष फसल की आवश्यकताओं के आधार पर क्षेत्र, ग्रीनहाउस और स्क्रीनहाउस सुविधाओं की एक प्रणाली की आवश्यकता होती है। बीज-प्रचारित फसलों के विपरीत, जहां बीजों को प्रतिस्थापित किया जा सकता है और एक द्वितीयक स्थल पर आसानी से संरक्षित किया जा सकता है। क्लोनल वनस्पति फसलों के लिए अधिक भूमि और श्रम या वैकल्पिक भंडारण तकनीकों की आवश्यकता होती है। क्लोनल फसलों के लिए क्रायोप्रिजर्वेशन तकनीकों का विकास वर्ष 1970 के दशक के अंत में शुरू हुआ। इन तकनीकों में तरल नाइट्रोजन (एलएन) में डुबकी लगाने के बाद नियंत्रित-दर शीतलन का उपयोग किया गया था और उन्हें ऐसे प्रोटोकॉल में विकसित किया

सुषुप्त अवस्था में बादाम वृक्ष

[1]बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग, भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012; [2]भाकृअनुप-राष्ट्रीय पादप आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, नई दिल्ली-110001

कलियों का क्रायोप्रिजर्वेशन

प्रसुप्त कलियों के क्रायोप्रिजर्वेशन के लिए प्ररोह सिरे या किसी अन्य कृत्रिम परिवेशीय सामग्री का उपयोग करने की तुलना में कम संसाधनों की आवश्यकता होती है। वर्तमान में, समशीतोष्ण वृक्षों और झाड़ियों की केवल कुछ प्रजातियों की सुषुप्त कलियों के नियमित क्रायोस्टोरेज की सूचना प्राप्त है। यह मुख्य रूप से जीनस या प्रजाति-विशिष्ट प्रसंस्करण प्रोटोकॉल की कमी के कारण, टहनी की कटाई और प्रसंस्करण के लिए आवश्यक गहरी सुषुप्त अवस्था की छोटी अवधि, या सटीक पोस्ट-क्रायोप्रिजर्वेशन व्यवहार्यता परीक्षण तकनीकों की कमी जो ग्राफ्टिंग की जगह ले सकती है। विभाज्योतक प्ररोह सिरे और सुषुप्त कलियों के प्रसार दोनों के अपने फायदे और नुकसान हैं। शूट टिप्स (प्ररोह सिरे) का उपयोग वर्ष के किसी भी समय किया जा सकता है, लेकिन उनके प्रसंस्करण के लिए एक टिशू कल्चर प्रयोगशाला और सड़न रोकने वाली तकनीक, माइक्रोस्कोपी कौशल एवं एक स्थापित इन विट्रो प्लांट रिकवरी सिस्टम की आवश्यकता होती है। यहाँ एक पूर्ण वृक्ष और एक विकसित झाड़ी पर फल लगने में 3 से 5 वर्ष लग सकते हैं। हालांकि, सुषुप्त कलियों का क्रायोप्रसंस्करण तेज और प्ररोह सिरे के क्रायोप्रिजर्वेशन की तुलना में लगभग दस गुना कम खर्चीला है।

गया था जो बढ़ते प्ररोह सिरे को स्थिर करें और पुनर्प्राप्त करने के लिए सफलतापूर्वक उपयोग किए गए।

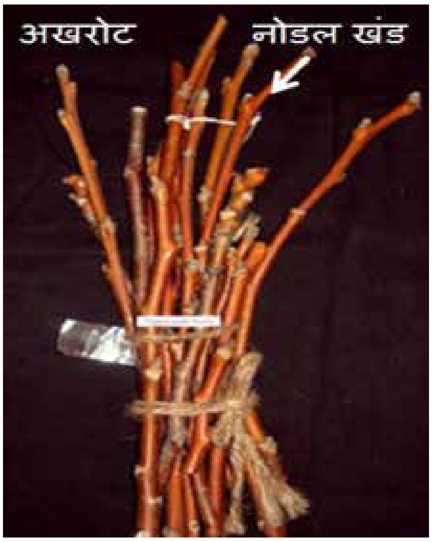

अखरोट की सुषुप्त कलियां

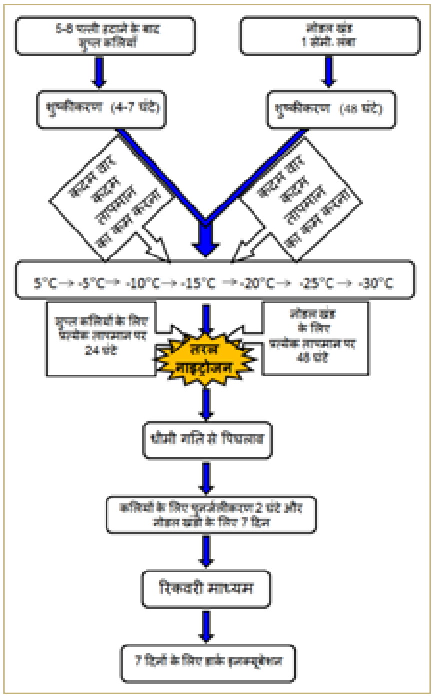

सुषुप्त कलियों के क्रायोप्रिजर्वेशन हेतु टू स्टेप फ्रीजिंग विधि

अपने अध्ययन में, हमने हिमालयी शहतूत, बादाम और अखरोट जैसे शीतोष्ण/पर्णपाती लकड़ी वाले वृक्षों की प्रजातियों के हिमपरिरक्षण के लिए सुषुप्त कलियों का उपयोग किया। सुषुप्त कलियों का हिमपरिरक्षण केवल उन प्रजातियों के लिए उपयुक्त है जो एक सुषुप्त अवस्था से गुजरती हैं। यह सर्दियों के मौसम में कुछ कम तापमान की अवधि हो सकती है। इस प्रक्रिया के लिए उपयुक्त आकार (1 वर्ष पुरानी पतली टहनी, आमतौर पर 4 से 8 मिमी व्यास) की सुषुप्त टहनी की आवश्यकता होती है, जिसमें 1-2 सें.मी. लंबे नोडल खंड होते हैं एवं आमतौर पर एक या दो कलियाँ होती हैं। तरल नाइट्रोजन वाष्प में डुबकी लगाने से पहले, सुषुप्त कलियों और नोडल खंडों को लगभग 12 से 25% नमी की मात्रा तक सुखाया जाना चाहिए। तरल नाइट्रोजन में

प्रयोग हेतु सुषुप्त अवस्था में शहतूत जर्मप्लाज्म

बादाम की सुषुप्त कलियां

लेमिनार वायु प्रवाह में नम काई घास के साथ पुनः गर्म सुषुप्त कलियों का पुनर्जलीकरण

-196°C तापमान पर डुबकी लगाने से पहले तापमान को क्रमिक रूप से -5° सेल्सियस/दिन पर -30° सेल्सियस के टर्मिनल तापमान तक कम करके द्वि-चरणीय ठंड को प्राप्त किया जा सकता है। सूखी कलियों को 1.0 मि.ली. पॉलीप्रोपाइलीन क्रायोवियल्स में पैक किया गया। इन क्रायोवियल्स को क्रमिक रूप से 5°C, -5°C, -10°C, -15°C, -20°C और -25°C, और -30°C प्रत्येक तापमान पर न्यूनतम 24 घंटे के लिए स्थानांतरित किया गया। क्रायोवॉयल को 48 घंटों के लिए -30°C पर रखा गया और फिर -196°C पर सीधे तरल नाइट्रोजन में डुबोया गया।

क्रायोप्रिजर्वेशन के बाद अलग-अलग अवधि के लिए नम मॉस ग्रास में डार्क इनक्यूबेशन और रिहाइड्रेशन जैसी रिकवरी वाली स्थिति से सामान्य से अधिक अंकुरण प्रतिशत प्राप्त हुआ। इस प्रकार पुनर्जलीकरण, तरल नाइट्रोजन में भंडारित कोशिकाओं को पुनर्जीवित करने में मदद करता है। इस नयी तकनीक के शोध द्वारा शहतूत की सुषुप्त कलियों में उच्च पुनर्प्राप्ति वाली सफलता देखी गयी है, जबकि बादाम और अखरोट की सुषुप्त कलियों में आंशिक प्रारंभिक सफलता देखी गयी। ■

कीवी फल की वैज्ञानिक खेती

श्याम सुन्दर, दीपा हंसराज द्विवेदी, हरीश कुमार मौर्य, सौरभ वर्मा और **बिपिन कुमार**

कीवी फल विटामिन सी, एंटीऑक्सीडेंट्स, विटामिन ई, विटामिन के, फाइबर और पोटेशियम जैसे खनिज तत्वों का एक अच्छा स्रोत है। यह फल स्वास्थ्य के लिए बेहद लाभकारी है। वैज्ञानिक खेती कीवी उत्पादन को बढ़ा सकती है, जो किसानों के लिए बेहद फायदेमंद हो सकता है। कीवी की खेती मुख्यत: समशीतोष्ण जलवायु में की जाती है, जहां ठंडे मौसम, हल्की बारिश और उपजाऊ दोमट मिट्टी होती है। वैज्ञानिक खेती में उन्नत किस्मों का चयन, सही समय पर रोपण, उचित खाद, सिंचाई प्रबंधन, कीटों और रोगों की रोकथाम पर विशेष ध्यान दिया जाता है। इसकी बढ़ती मांग, खासकर घरेलू और विदेशी बाजार में इसे एक लाभदायक उत्पाद बनाती है। हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड और उत्तर-पूर्वी राज्यों में कीवी उत्पादन ने किसानों के जीवनस्तर में सुधार किया है। इस प्रकार वैज्ञानिक पद्धतियों से कीवी की खेती न केवल आर्थिक रूप से बल्कि पोषण सुरक्षा और कृषि के विकास में भी लाभदायक है।

कीवी फल, जिसका वैज्ञानिक नाम *एक्टिनिडिया डेलीसिओसा* है, भारत में उच्च पोषण और उच्च बाजार मूल्य के कारण तेजी से लोकप्रिय हो रहा है। यह फल लंबा और भूरा होता है। इसमें विटामिन-सी, विटामिन-ई, विटामिन-के, फाइबर और पोटेशियम जैसे विभिन्न खनिज तत्व होते हैं। कीवी में एंटीऑक्सीडेंट भरपूर मात्रा में होते हैं, जो शरीर को रोगों से बचाते हैं। भारत में कीवी की अधिकांश खेती उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश, अरुणाचल प्रदेश, सिक्किम और दार्जिलिंग में होती है।

जलवायु और मिट्टी

कीवी को हल्की उपोष्ण और समशीतोष्ण जलवायु की जरूरत होती है, और सामान्य बारिश इसके लिए अच्छी मानी जाती है। इसकी खेती 800 से 1500 मीटर की ऊंचाई पर होती है तथा 15 डिग्री तापमान पर कीवी के पौधे अच्छे से अंकुरित होते हैं, फल के विकास के लिए 5 से 7 डिग्री का तापमान होना चाहिए। इसके पौधे 30 डिग्री तक तापमान सहन कर सकते हैं। कीवी की खेती के लिए उचित जल निकासी वाली भूमि की आवश्यकता होती है। कीवी की खेती हल्की अम्लीय और गहरी दोमट मिट्टी में की जा सकती है, जहां मिट्टी में अधिक कार्बनिक पदार्थ होते हैं। मिट्टी का पीएच मान 5 से 6 उपयुक्त होता है।

पौध रोपाई

कीवी फल के रोपण के लिए हल्की ढलान वाली समतल भूमि उत्तम है। पौधों के बीच की दूरी उगाई जाने वाली किस्मों और प्रशिक्षण प्रणाली पर निर्भर करती है। कीवी फल के पौधों को दिसंबर से जनवरी तक पूर्व से तैयार गड्ढों में 5 से 6 मीटर पौधे से पौधे और 4 मीटर पंक्ति से पंक्ति की दूरी पर लगाया जाता है। नर पौधों को रोपण करते समय पूरे ब्लॉक में फैलाया जाता है, प्रत्येक मादा एक नर के बगल में होती है। नर-मादा अनुपात 1:8 या 1:9 होना चाहिए।

सिंचाई और जल प्रबंधन

कीवी की वानस्पतिक वृद्धि तेज होती है और पत्तियों का सतही क्षेत्रफल बड़ा होता है, इसलिए इसे अधिक पानी की जरूरत होती है। जिन क्षेत्रों में वर्षा 150 सें.मी. से अधिक होती है, और समुद्रतल से ऊंचाई 1500 मीटर के आसपास या अधिक हो, सिंचाई की आवश्यकता कम होती है। प्रारम्भ के 3 से 5 वर्षों में सिंचाई का समुचित प्रबंधन होना आवश्यक होता है। नई बेलों को 2-3 दिनों के अंतराल पर सिंचित किया जाना चाहिए,

बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ-226025, (उत्तर प्रदेश)

जबकि फलदार बेलों को गर्मियों में खेत की क्षमता से मिट्टी की नमी में 20 प्रतिशत की कमी (5-6 दिनों के अंतराल) पर सिंचित किया जाना चाहिए ताकि वे बेहतर आकार के फल दे सकें।

निराई-गुड़ाई और मल्चिंग

बेल के बेसिन को नियमित रूप से साफ किया जाना चाहिए, खाद और मल्चिंग से ठीक पहले निराई-गुड़ाई कर देनी चाहिए। निराई-गुड़ाई करने के बाद पौधे के चारों तरफ फसल के अवशेष, खरपतवार के अवशेष तथा प्लास्टिक मल्च का प्रयोग करना चाहिए।

प्रमुख किस्में

भारत में कीवी की निम्न किस्मों का उत्पादन किया जाता है:

- **हेवर्ड**- फल चौड़ा और चपटा होता है, जो लंबाई के संबंध में बहुत अधिक चौड़ा होता है।
- **एबॉट**- यह जल्दी फूलने वाली और जल्दी पकने वाली किस्म है। इसके फल आयताकार, मध्यम आकार के और घने बालों से ढके होते हैं।
- **एलिसन**- यह अधिक फल देने वाली और शीघ्र पकने वाली किस्म है, जो हिमाचल प्रदेश के लिए सबसे उपयुक्त किस्म है।
- **मोंटी**- यह देर से फूलने वाली किस्म है लेकिन इसके फल जल्दी पक जाते है। इसके फल आयताकार होते हैं, जो एबॉट और एलिसन के फलों से मिलते-जुलते हैं।

खाद और उर्वरक प्रबंधन

कीवी की लतायें अधिक फल देती हैं, इसलिए इनके विकास और फलने के लिए पर्याप्त खाद एवं उर्वरक की आवश्यकता होती है। उर्वरक का निर्धारण मृदा की उर्वरता, बेल की आयु और फलोत्पादन पर निर्भर करता है। पांच वर्ष के पौधे को 40 किलोग्राम गोबर की खाद, 850 ग्राम नाइट्रोजन, 500 ग्राम सुपर फॉस्फेट और 800 से 850 ग्राम पोटेशियम की आवश्यकता होती है।

नाइट्रोजन को दो भागों में विभाजित करके देना चाहिए। जनवरी से फरवरी तक आधा भाग और शेष आधा भाग फल बनने पर (अंत अप्रैल या शुरू मई) प्रयोग करना चाहिए। दिसंबर से जनवरी तक, गोबर की खाद के साथ फॉस्फोरस और पोटेशियम की पूरी मात्रा भूमि में डाल देते हैं। ड्रिप सिंचाई के माध्यम से अनुशंसित एनपीके उर्वरकों की 2/3 मात्रा को 10 दिनों के अंतराल पर बराबर मात्रा में प्रयोग करने की सिफारिश की जाती है, इससे उर्वरक की 25 प्रतिशत बचत होती है और गुणवत्ता वाले फलों की उपज में वृद्धि होती है।

टहनियों की देखभाल और छंटाई

कीवी फल में टी-बार ट्रेलिस और परगोला प्रणाली सबसे अधिक लोकप्रिय हैं। टी-बार ट्रेलिस प्रणाली में लोहे और कंक्रीट के खंभे, जमीन से लगभग 1.8 मीटर ऊंचे, एक दूसरे से 6 मीटर की दूरी पर एक पंक्ति में खड़े किए जाते हैं। 1.5 मीटर का एक क्रॉस आर्म प्रत्येक खंभे पर लगा हुआ है, जो 45 सें.मी. की दूरी पर पांच आउट्रिगर तार को ले जाता है। बेलों को एकल तने के तार तक प्रशिक्षित करने के बाद, केंद्र तार के साथ विपरीत दिशा में दो लीडर्स बनाए जाते हैं। इसके बाद 25-30 सें.मी. की दूरी पर प्रत्येक लीडर के दोनों किनारों पर अस्थायी फल देने वाली शाखाएं इन स्थायी लीडर्स में से चयनित जाती हैं। बेलों की ट्रेनिंग परगोला प्रणाली पर टी-बार की तरह होती है। खंभों पर एक सपाट शीर्ष वाला क्रिस-क्रॉस वायर नेटवर्क बनाया जाता है। यह सिस्टम बनाना महंगा है लेकिन प्रशिक्षित बेलें अधिक उत्पादन

कीवी में परागण हेतु मधुमक्खियों का अहम योगदान

स्वास्थ्यवर्द्धक कीवी

यह छोटा सा फल बहुत से पोषक तत्वों से भरपूर है, जो कई रोगों को ठीक करने या उनके लक्षणों को कम करने में मदद करता है।

इम्यून सिस्टम

कीवी शरीर की इम्यूनिटी को मजबूत करने वाले विटामिन सी का एक उत्तम स्रोत है। इससे खांसी, सर्दी और अन्य संक्रमणों से बचने की क्षमता बढ़ती है। नियमित रूप से कीवी खाने से शरीर कई रोगों से बच सकता है।

पाचन तंत्र

कीवी में घुलनशील और अघुलनशील फाइबर पाचन को सुधारते हैं। इससे कब्ज दूर होती है और पेट साफ होता है। फाइबर शरीर से विषाक्त पदार्थों को निकालने में और पाचन को नियमित करता है।

आंखों को रखें स्वस्थ

ल्यूटिन और जेक्सैन्थिन, कीवी में पाए जाने वाले दो प्रमुख एंटीऑक्सीडेंट्स, आंखों के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं। ये मोतियाबिंद और एज-रिलेटेड मैक्युलर डीजेनेरेशन से बचाव करते हैं और आंखों को लंबे समय तक स्वस्थ रखते हैं।

ब्लड प्रेशर

कीवी में प्रचुर मात्रा में पोटेशियम होता है, जो शरीर में सोडियम का संतुलन बनाए रखने में मदद करता है। इससे रक्तचाप नियंत्रित रहता है। कीवी, उच्च रक्तचाप के लिए एक अच्छा फल माना जाता है।

मधुमेह में लाभकारी

कीवी में प्राकृतिक शर्करा की मात्रा कम होती है और इसमें कम ग्लाइसेमिक इंडेक्स होता है, जो इसे ब्लड शुगर को नियंत्रित करने में मदद करता है। डायबिटीज से ग्रसित लोग चिंता किए बिना कीवी खा सकते हैं।

रोग एवं कीट

फाइटोफ्थोरा मृदाजनित जीवों के साथ संदूषण से कीवी की खेती में जड़ सड़न रोग हो सकता है। *आर्मिलारिया नोवाजेलैंडिया* एक हानिकारक रोग है जो स्थानीय बूटलेस जीवों, दूषित मृत पेड़ के स्टंपों या मिट्टी में दबी हुई लकड़ी से कीवी फल में फैलता है।

नियंत्रण- मिट्टी के जल निकासी तंत्र में सुधार करें और फॉसेटायल-एल्युमिनियम जैसे फफूंदनाशकों का उपयोग करें।

फल मक्खी

सर्वप्रथम फलों पर छोटे-छोटे छेद करती हैं। बाद में सड़न उत्पन्न हो जाती है और अंत में फल गिर जाते हैं।

नियंत्रण- फलों की नियमित रूप से देखरेख करनी चाहिए और फलों पर बायोकेच ट्रैप लगना चाहिए।

पौष्टिक कीवी फल

देती हैं। उच्च गुणवत्ता वाले फलों की उच्च उपज प्राप्त करना और वनस्पति विकास को नियंत्रित करना छंटाई का मुख्य उद्देश्य है।

परागण

कीवी फल की फसल परागण पर बहुत निर्भर करती है, क्योंकि पौधे द्विलिंगी होते हैं। प्रत्येक 9 स्त्रीकेसर पौधों में प्रभावी परागण के लिए एक नर पौधा लगाया जाता है। जबकि यह हवा और कीट परागण में बहुत महत्वपूर्ण हैं, बाग में मधुमक्खियों के आने से फलों की संख्या और आकार में वृद्धि होती है। कीवी फल के बागों में प्रभावी परागण के लिए प्रति हैक्टर लगभग 8 से 9 मधुमक्खी कॉलोनियों की आवश्यकता होती है। बेहतर आकार और गुणवत्ता वाले फल पाने के लिए हस्त परागण भी आवश्यक है।

फसल कटाई और उत्पादन

कीवी की बेल 4 से 5 वर्ष की उम्र में विकसित होने लगती है, जबकि व्यावसायिक उत्पादन 7 से 8 वर्ष की उम्र में शुरू होता है। फल कम ऊंचाई पर पहले बढ़ते हैं और फिर तापमान में बदलाव के कारण अधिक ऊंचाई पर बढ़ते हैं। छोटे फलों को आकार में बढ़ने दिया जाता है, जबकि बड़े फलों को पहले तोड़ लिया जाता है।

फल परिपक्वता के दौरान कीवी फल के छिलके, गूदे या आकार में कोई बदलाव नहीं होता, इसलिए यह मानना कठिन है कि किस समय फल सबसे अच्छे से पके हैं। 6.20° बी टीएसएस का परिपक्वता सूचकांक फलों की कटाई के लिए अच्छा है।

उत्तम कटाई समय निर्धारित करने के लिए टीएसएस सबसे अच्छा सूचकांक पाया गया। फल के छिलके पर मौजूद बाल भी परिपक्वता के दौरान बहुत आसानी से हट जाते हैं, इसलिए इसका उपयोग कटाई या परिपक्वता का पता लगाने के लिए किया जा सकता है। फलों को हल्के से मोड़कर हाथों से बिना डंठल के तोड़ते हैं। एक पौधे से औसतन 50-80 किलोग्राम फल प्राप्त होते हैं।

भाकृअनुप की मासिक लोकप्रिय पत्रिका
'खेती' मार्च, 2025 अंक के प्रमुख आकर्षण

- भारतीय कृषि में कृषि प्रणाली अनुसंधान का योगदान, चुनौतियां एवं नवीन आयाम
- जैविक एवं प्राकृतिक खेती राष्ट्रीय प्रयास एवं योजनाएं
- पश्चिमी भारत के शुष्क क्षेत्रों में सतत आजीविका हेतु समेकित कृषि प्रणाली मॉडल
- पशु आधारित कृषि प्रणालियां
- मैदानी क्षेत्रों में खाद्य और पोषण सुरक्षा की कुंजी
- सतत विकास एवं खाद्य सुरक्षा हेतु जलवायु स्मार्ट कृषि
- भारत के पूर्वी क्षेत्रों में उच्च आय सृजन और आजीविका सुरक्षा
- समेकित कृषि प्रणाली: दक्षिण भारत के छोटे किसानों की आय में सुधार
- आधुनिक कृषि में स्थिरता, उत्पादकता और लाभप्रदता को बढ़ावा
- आर्थिक एवं पोषण स्थिरता हेतु कृषि प्रणाली में केले का समावेश
- प्रकृति सकारात्मक खेती से सतत विकास और पर्यावरण संरक्षण
- उत्तराखंड के किसानों की खाद्य, पोषण और पर्यावरण सुरक्षा
- हिमालयी क्षेत्रों में जैविक सब्जी उत्पादन
- जैविक उत्पादन प्रणाली के तहत फसलों में समेकित पोषण प्रबंधन

संपर्क सूत्र: प्रभारी, व्यवसाय एकक, भाकृअनुप-कृषि ज्ञान प्रबंधन निदेशालय, कैब-1, पूसा गेट, नई दिल्ली-110012
दूरभाष: 25843657, www.icar.org.in

बुंदेलखंड में स्ट्रॉबेरी उत्पादन

ज्योत्स्नारानी प्रधान[1], **हेमलता सिंह**[1], **ललिता राणा**[2], और **आशुतोष कुमार**[3]

बुंदेलखंड क्षेत्र, जो उत्तर-मध्य भारत में स्थित है, अर्ध-शुष्क क्षेत्रों का एक महत्वपूर्ण उदाहरण है। यह क्षेत्र जलवायु परिवर्तनों के प्रभावों के प्रति अत्यधिक संवेदनशील है। बुंदेलखंड की उपयुक्त जलवायु परिस्थितियों के साथ-साथ स्ट्रॉबेरी की बढ़ती घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय मांग, इसे संभावित नकदी फसल के रूप में स्थापित करती है। इस फल को उगाने के लिए उपयुक्त किस्मों का चयन, भूमि की तैयारी, सिंचाई, उर्वरक और कीट नियंत्रण जैसे विभिन्न चरण शामिल हैं। स्ट्रॉबेरी की खेती के आर्थिक और सामाजिक लाभों की खोज से उच्च बाजार मांग, त्वरित विकास चक्र और भरपूर लाभ का पता चलता है। अपर्याप्त बुनियादी ढांचे, गुणवत्तापूर्ण सामग्री तक पहुंच और किसान प्रशिक्षण जैसी चुनौतियों का समाधान करने के लिए सरकारी समर्थन महत्वपूर्ण है। उचित तकनीकों और समर्थन के साथ, स्ट्रॉबेरी की खेती किसानों की आय में उल्लेखनीय वृद्धि कर सकती है। इसके साथ ही बुंदेलखंड के आर्थिक और सामाजिक उत्थान में योगदान कर सकती है।

उत्तर-मध्य भारत में स्थित बुंदेलखंड अपनी कृषि क्षमता के लिए प्रसिद्ध है। इसकी बहुमुखी जलवायु इसे विभिन्न प्रकार की विदेशी और गैर-पारंपरिक फसलों की खेती के लिए आदर्श बनाती है। बुंदेलखंड का भौगोलिक क्षेत्र अपनी अद्वितीय जलवायु और मिट्टी की विशेषताओं के कारण स्ट्रॉबेरी जैसी नई फसलों की खेती के लिए संभावनाएं प्रदान करता है। भले ही यह क्षेत्र पारंपरिक रूप से शुष्क और अर्ध-शुष्क जलवायु के लिए जाना जाता है, लेकिन स्ट्रॉबेरी की खेती के लिए आवश्यक कुछ महत्वपूर्ण तत्व इस क्षेत्र में उपलब्ध हैं, जैसे कि ठंडी रातें और गर्म दिन, जो स्ट्रॉबेरी के विकास के लिए फायदेमंद हो सकते हैं।

हाल के वर्षों में स्ट्रॉबेरी जैसी नई और उच्च मूल्य वाली फसलें उगाने में रुचि बढ़ रही है। बुंदेलखंड में स्ट्रॉबेरी की खेती इस क्षेत्र के किसानों के लिए लाभकारी नकदी फसल बनने की क्षमता रखती है। यह फल विटामिन सी और आयरन से भरपूर है। इसमें उच्च स्वाद के साथ-साथ चमकदार लाल रंग है जो इसे मिष्ठान्न और अन्य मूल्यवर्धित उत्पादों के लिए उपयुक्त बनाता है। स्ट्रॉबेरी की मांग घरेलू और अंतरर्राष्ट्रीय स्तर पर लगातार बढ़ रही है, जिससे एक ऐसा बाजार तैयार हो रहा है जिसका फायदा बुंदेलखंड के किसान उठा सकते हैं। इसके अतिरिक्त, स्ट्रॉबेरी एक उच्च मूल्य वाली फसल है, जिसमें लाभ की भरपूर संभावनाएं हैं।

बुंदेलखंड की भौगोलिक विशेषताओं का स्ट्रॉबेरी की खेती पर प्रभाव

मृदा संरचनाः बुंदेलखंड की अधिकांश भूमि में लाल और दोमट मिट्टी पाई जाती है, जो जल निकासी के लिए अनुकूल होती है। स्ट्रॉबेरी के लिए अच्छी जल निकासी आवश्यक होती है, क्योंकि यह फसल जल जमाव में पनप नहीं सकती। मिट्टी में जैविक पदार्थों की मात्रा बढ़ाकर और मल्चिंग का उपयोग करके इसे और अधिक उपयुक्त बनाया जा सकता है।

---

[1]वनस्पति विज्ञान, पादप शरीर क्रिया विज्ञान एवं जैव रसायन विभाग, आधार विज्ञान एवं मानविकी महाविद्यालय; [2]कृषि विज्ञान विभाग, गन्ना अनुसंधान संस्थान, डॉ. राजेंद्र प्रसाद केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर, बिहार; [3]मौलिक विज्ञान विभाग, रानी लक्ष्मी बाई केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, झाँसी, उत्तर प्रदेश

उच्च बाजार मांग

एक रिपोर्ट के अनुसार (इंडिया स्टेट) वर्ष 2021-22 और वर्ष 2022-23 के दौरान भारत में स्ट्रॉबेरी का क्षेत्रफल और उत्पादन क्रमशः 2600 हैक्टर और 11400 मीट्रिक टन और 2400 हैक्टर और 18900 मीट्रिक टन था। यह बढ़ती मांग किसानों को स्ट्रॉबेरी की खेती पर विचार करने के लिए एक मजबूत आर्थिक प्रोत्साहन प्रदान करती है। बुंदेलखंड में स्ट्रॉबेरी की खेती का प्रभाव आर्थिक और सामाजिक रूप से महत्वपूर्ण हो सकता है। आर्थिक दृष्टिकोण से, स्ट्रॉबेरी में किसानों को आय का एक स्थिर स्रोत प्रदान करने की क्षमता है, साथ ही प्रसंस्करण और विपणन में रोजगार के अवसर भी पैदा होते हैं। सामाजिक रूप से, स्ट्रॉबेरी की खेती बुंदेलखंड में किसानों के जीवन स्तर को बेहतर बनाने में मदद कर सकती है, जिससे उन्हें शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल और अन्य बुनियादी जरूरतों में निवेश करने में मदद मिलेगी।

उत्पादित स्वस्थ स्ट्राबेरी

जलवायुः बुंदेलखंड की सर्दियाँ हल्की और गर्मियाँ बहुत गर्म होती हैं। हालांकि, स्ट्रॉबेरी ठंडी जलवायु की फसल है, लेकिन यहां की ठंडी रातें और सर्दियों का मौसम इसे उत्पादन हेतु उपयुक्त बना सकते हैं। अक्टूबर से फरवरी के बीच का समय स्ट्रॉबेरी के विकास और फलों के पकने के लिए अनुकूल हो सकता है, बशर्ते तापमान को सही तरीके से प्रबंधित किया जाए।

जल संसाधनः इस क्षेत्र में पानी की उपलब्धता एक बड़ी चुनौती है, लेकिन आधुनिक सिंचाई तकनीकों जैसे ड्रिप सिंचाई प्रणाली का उपयोग करके इस चुनौती को प्रभावी ढंग से प्रबंधित किया जा सकता है। स्ट्रॉबेरी की जड़ें नाजुक होती हैं और उन्हें नियमित रूप से नमी की आवश्यकता होती है, जिसे ड्रिप सिंचाई द्वारा नियंत्रित तरीके से उपलब्ध करवाया जा सकता है।

पलवार विधि द्वारा स्ट्रॉबेरी की खेती

ऊँचाई और तापमानः बुंदेलखंड की ऊँचाई और तापमान में उतार-चढ़ाव स्ट्रॉबेरी की बढ़ोतरी और गुणवत्ता पर असर डाल सकता है। स्ट्रॉबेरी के लिए दिन के समय धूप और रात के समय ठंडक लाभकारी होती है, जो इस क्षेत्र में काफी हद तक प्राप्त की जा सकती है। यह स्थिति स्ट्रॉबेरी की खेती के लिए अनुकूल है। इस क्षेत्र में ठंडी सर्दियों और हल्की गर्मियों के साथ समशीतोष्ण जलवायु का अनुभव होता है, जो स्ट्रॉबेरी की वृद्धि के लिए आदर्श है।

लघु विकास चक्र

कई पारंपरिक फसलों की तुलना में स्ट्रॉबेरी का विकास चक्र अपेक्षाकृत छोटा होता है। रोपण से लेकर कटाई तक, चक्र 90 से 120 दिनों तक का हो सकता है। इससे किसानों को एक वर्ष में कई चक्रों में खेती करने का मौका मिलता है। इससे उनके संभावित राजस्व में वृद्धि होती है।

निवेश पर उच्च रिटर्न

रोपण सामग्री और बुनियादी ढांचे की लागत के कारण स्ट्रॉबेरी की खेती के लिए प्रारंभिक निवेश पारंपरिक फसलों की तुलना में अधिक हो सकता है, लेकिन रिटर्न काफी अधिक प्राप्त होता है। उचित प्रबंधन और विपणन हस्तक्षेप के साथ, किसान उच्च लाभ मार्जिन की उम्मीद कर सकते हैं, प्रति हैक्टर 30 लाख, जिससे स्ट्रॉबेरी एक व्यवहार्य नकदी फसल बन गई है।

लाभ से भरपूर

स्ट्रॉबेरी की खेती बुंदेलखंड के किसानों के लिए विविधता लाने और अपनी आय बढ़ाने का एक आशाजनक अवसर प्रस्तुत करती है। उपयुक्त किस्मों का चयन करने, आधुनिक कृषि पद्धतियों को अपनाने और सरकारी समर्थन का लाभ उठाने सहित सही दृष्टिकोण के साथ, स्ट्रॉबेरी क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण नकदी फसल के रूप में उभर सकती है। इस क्षमता को अपनाकर, बुंदेलखंड अधिक समृद्ध और अनुकूल कृषि क्षेत्र का मार्ग प्रशस्त कर सकता है। निष्कर्षत: बुंदेलखंड में स्ट्रॉबेरी की खेती राज्य के लिए अपने कृषि परिदृश्य में विविधता लाने और अपने किसानों के लिए आय का एक वैकल्पिक स्रोत प्रदान करने का एक आकर्षक अवसर प्रस्तुत करती है। हालाँकि, रोगों से संबंधित चुनौतियों का समाधान करना और स्थानीय कृषि-जलवायु परिस्थितियों के अनुकूल किस्मों का विकास करना इस प्रयास की दीर्घकालिक सफलता के लिए महत्वपूर्ण होगा। हालांकि कुछ चुनौतियाँ हैं जिन्हें सही समर्थन और निवेश के साथ पूर्ण करने की आवश्यकता है। स्ट्रॉबेरी बुंदेलखंड के लिए एक सफल नकदी फसल बन सकती है, जो राज्य के आर्थिक और सामाजिक विकास में योगदान दे सकती है।

वैज्ञानिक तकनीक

किस्मों का चयन

सफल खेती के लिए स्ट्रॉबेरी की सही किस्म का चयन करना महत्वपूर्ण है। स्ट्रॉबेरी की कैमरोजा विंटर डाउ, स्वीट चार्ली और स्वीट संसेशन जैसी किस्मों ने बुंदेलखंड की जलवायु परिस्थितियों के लिए भी अच्छी अनुकूलन क्षमता दिखाई है। ये किस्में अपनी उच्च उपज के साथ-साथ बेहतर फल गुणवत्ता के लिए जानी जाती हैं।

भूमि की तैयारी एवं रोपण

स्ट्रॉबेरी 5.5 से 6.5 पीएच मान वाली अच्छी जल निकासी वाली, रेतीली दोमट मिट्टी में पनपती है। जुताई, समतलीकरण और कार्बनिक पदार्थ मिलाने सहित भूमि की उचित तैयारी आवश्यक है। पर्याप्त जल निकासी सुनिश्चित करने और जड़ सड़न को रोकने के लिए ऊंची क्यारियों की सिफारिश की जाती है। अच्छी फसल सुनिश्चित करने के लिए रोपण ठंडे महीनों में किया जाना चाहिए, मुख्य रूप से अक्टूबर और नवंबर के बीच। स्वस्थ फसल स्थापना के लिए गुणवत्ता पूर्ण, रोगमुक्त रोपण सामग्री का उपयोग करना महत्वपूर्ण है।

सिंचाई एवं उर्वरक

उथली जड़ वाला पौधा होने के कारण स्ट्रॉबेरी को प्रत्येक सिंचाई में अधिक लेकिन कम मात्रा में पानी की आवश्यकता होती है। ड्रिप सिंचाई की अत्यधिक अनुशंसा की जाती है क्योंकि यह पानी का कुशल उपयोग सुनिश्चित करती है और कवक रोगों के संकट को भी कम करती है। संतुलित पोषक तत्व मिश्रण के साथ नियमित खाद डालें, जिसमें 25-50 टन गोबर की खाद, 75-100 किग्रा नाइट्रोजन, 40-120 किग्रा. फॉस्फोरस, 40-80 किग्रा. पोटेशियम/हैक्टर, पौधों की जोरदार वृद्धि और फल उत्पादन के लिए आवश्यक है।

कीट एवं रोग प्रबंधन

स्ट्रॉबेरी विभिन्न कीटों और रोगों के प्रति संवेदनशील होती है, जिनमें एफिड्स, माइट्स और फफूंदजनित संक्रमण शामिल हैं, जिससे उपज में 60% तक की हानि होती है। एकीकृत कीट प्रबंधन (आईपीएम), जैसे जैविक नियंत्रण एजेंटों का उपयोग, नियमित निगरानी और उचित रासायनिक उपचार शामिल हैं।

कटाई एवं विपणन

सर्वोत्तम स्वाद और गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए स्ट्रॉबेरी की कटाई आमतौर पर तब की जाती है जब वे पूरी तरह से पक जाती हैं। क्षति को कम करने और शेल्फ जीवन को बढ़ाने के लिए कटाई के दौरान और कटाई के बाद सावधानी बरतना महत्वपूर्ण है। पटना, कोलकाता, रांची और दिल्ली के स्थानीय बाजारों, सुपरमार्केट और खाद्य प्रसंस्करण इकाइयों के साथ सामंजस्य सहित मजबूत बाजार संबंध स्थापित करने से किसानों को उनकी उपज के लिए बेहतर कीमत हासिल करने में मदद मिल सकती है।

लाभ से भरपूर स्ट्रॉबेरी

सरकारी समर्थन और पहल

बुंदेलखंड में स्ट्रॉबेरी की खेती के संभावित लाभों के बावजूद, कुछ चुनौतियाँ भी हैं जिनका समाधान करने की आवश्यकता है। इस क्षेत्र में स्ट्रॉबेरी की खेती के लिए बुनियादी ढांचे, विपणन और समर्थन की कमी कुछ मुख्य चुनौतियाँ हैं। बुंदेलखंड में किसान अक्सर उच्च गुणवत्ता वाली रोपण सामग्री, उर्वरक और कीटनाशकों के साथ-साथ अपनी उपज के लिए बाजार खोजने के लिए संघर्ष करते हैं। इसके अतिरिक्त, स्ट्रॉबेरी की खेती के लिए विशिष्ट ज्ञान और कौशल की आवश्यकता होती है, जिसकी बुंदेलखंड के कई किसानों में कमी हो सकती है।

इन चुनौतियों से निपटने के लिए, सरकार और अन्य हितधारकों के लिए स्ट्रॉबेरी की खेती में रुचि रखने वाले किसानों को सहायता और प्रशिक्षण प्रदान करना महत्वपूर्ण है। इसमें उच्च गुणवत्ता वाले आदानों तक पहुंच प्रदान करना, प्रशिक्षण कार्यक्रम स्थापित करना और स्ट्रॉबेरी के लिए विपणन चैनल बनाना शामिल हो सकता है। ऐसा करने से, बुंदेलखंड में किसान खेती के संभावित लाभों का फायदा उठाने के लिए बेहतर ढंग से सुसज्जित हो सकते हैं संरक्षित खेती, सूक्ष्म सिंचाई, कायाकल्प और फल फसलों के क्षेत्र विस्तार जैसी गतिविधियों को अपनाने में महत्वपूर्ण सुधार हुआ है, जो बागवानी क्षेत्र के लिए अच्छा संकेत है।

प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना (पीएमकेएसवाई-पीडीएमसी) का प्रति बूंद अधिक फसल घटक देश में वर्ष 2015-16 से चालू है जो कृषि स्तर पर जल उपयोग दक्षता बढ़ाने पर केंद्रित है। सूक्ष्म सिंचाई (एमआई) के माध्यम से, किसान उचित प्रशिक्षण और प्रदर्शन के साथ सरकार से 90% सब्सिडी का लाभ उठाकर स्ट्रॉबेरी की खेती शुरू कर सकते हैं।

सरकार विभिन्न योजनाओं और सब्सिडी के माध्यम से बागवानी को सक्रिय रूप से बढ़ावा दे रही है। स्ट्रॉबेरी की खेती में रुचि रखने वाले किसान वित्तीय सहायता, तकनीकी प्रशिक्षण और गुणवत्तापूर्ण रोपण सामग्री तक पहुंच से लाभ उठा सकते हैं। कृषि अनुसंधान संस्थानों के साथ सहयोग किसानों के ज्ञान और प्रथाओं को और बढ़ा सकता है, जिससे उच्च उत्पादकता और लाभप्रदता बढ़ सकती है। ■

सब्जी मटर की सफल खेती

विनय कुमार[1], **प्रतीक सिंह**[1], **आनंद कुमार सिंह**[1], **राम कुमार**[2] और **पूनम मौर्या**[3]

बुन्देलखण्ड क्षेत्र में 13 जिले शामिल हैं। इसमें उत्तर प्रदेश के 7 जिले और मध्य प्रदेश के 6 जिले शामिल हैं। यहां मटर, सब्जी वाली मटर या हरी मटर के रूप में भी जानी जाती हैं। यह लेग्यूमिनोसी कुल का सदस्य हैं इसका वानस्पतिक नाम *पाइसम सेटाइवम* किस्म होंर्टेस हैं। इसकी जड़ों मे राइजोबियम नामक जीवाणु पाया जाता है जो वातावरण में मौजूद नाइट्रोजन को पौधों की गाठों के रूप मे एकत्र करता है जिससे फसल की पैदावार में वृद्धि होती है।

हरी मटर हमारे शरीर मे रक्त शर्करा को नियंत्रण करने मे मदद करती हैं। हरी मटर पाचन मे सुधार करने मे मदद करती है। हरी मटर का भूसा एक पौष्टिक चारा है और इसका उपयोग किसी भी पशुधन के चारे के रूप मे कर सकते हैं। भारत में हरी मटर का उत्पादन कर्नाटक, मध्य प्रदेश, राजस्थान, पश्चिम बंगाल, पंजाब, असोम, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश, बिहार और ओडिशा में किया जाता है। वहीं उत्तर प्रदेश के बुन्देलखण्ड क्षेत्र मे हरी मटर उत्पादक मुख्य जिले ललितपुर, जालौन, महोवा, हमीरपुर आदि है।

[1]उद्यान विज्ञान विभाग; [2]कीट विज्ञान एवं कृषि जन्तु विज्ञान विभाग, कृषि विज्ञान संस्थान, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी-1221005 (उ.प्र.); [3]भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली-110012

जलवायु

हरी मटर की फसल के लिए नम और ठण्डी जलवायु की आवश्यकता होती है। हरी मटर को फूल एवं फली बनते समय ठण्डी एवं पाला रहित जलवायु की आवश्यकता होती है। इसके जमाव के लिए उपयुक्त तापमान लगभग 20 से 25°C होता है। उच्च तापमान फली की गुणवत्ता को कम कर देता है क्योंकि बीजो में शर्करा हेमिसेलुलोज और स्टार्च में बदल जाती है।

उपयोगी

मटर का प्रयोग हरी अवस्था मे फलियों के रूप में सब्जी बनाने में, सूप और जमे हुए डिब्बाबंद खाद्य उत्पादों में किया जाता है। हरी मटर एक बहुत ही पोषक तत्व वाली सब्जी है। इसमें सर्वाधिक मात्रा में प्रोटीन (7.5%), विटामिन A और B, पोषक तत्व जैसे आयरन, मैग्नीशियम, फॉस्फोरस और जस्ता प्रचुर मात्रा मे पाये जाते हैं।

मृदा

फलीदार फसल होने के कारण उन सभी कृषि योग्य भूमि में, जिसमें उचित मात्रा में नमी उपलब्ध हो, उसमे हरी मटर की खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। मटियार दोमट मृदा तथा दोमट मृदा हरी मटर की खेती के लिए अधिक उत्तम होती है जिसका पी.एच. मान 6.0 से 7.5 के मध्य हो उपयुक्त होती है।

उन्नत किस्में

अगेती वर्गीय प्रजाति – ए.पी.-3, अगेता (उकठा रोधी), अर्किल, हरभजन आदि।

मध्यम वर्गीय प्रजाति – आजाद पी. उगाई जाती हैं।

बुआई और बीज दर

बुआई का समय और बीज दर न केवल फसल उत्पादन मे अहम भूमिका निभाते हैं। अच्छी फसल लेने के लिए हरी मटर की बुआई मध्य अक्टूबर से मध्य नबम्वर तक कर देनी चाहिए।

अगेती प्रजातियों की बीजदर 100-120 कि.ग्रा./हैक्टर एवं मध्य और देर से बोई जाने वाली प्रजातियों की बीज दर 80-90 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से बुआई के लिए उपयुक्त होती है।

बीजोपचार

खेत में बोने से पहले बीज का उपचार *राइजोबियम बैक्टीरिया* से कर लेना चाहिए। यह हरी मटर के उत्पादन और गुणवत्ता को बढ़ाने का सबसे सरल तरीका है। बीज को उपचारित करने के लिए सबसे पहले गुड़ के घोल की आवश्यकता होती है। ताकि *राइजोबियम* बीज की ऊपरी सतह पर अच्छी तरह से चिपक जायें। इसमें 10 प्रतिशत गुड़ के घोल को 15 मिनटों तक उबालते हैं और फिर घोल को कमरे के तापक्रम पर ठण्डा करते हैं। ठण्डा होने के बाद गुड़ का घोल और *राइजोबियम* बीज के ऊपर छिड़ककर बीज में अच्छी तरह मिलाते हैं। अच्छी तरह मिलाने के बाद बीज को कुछ समय के लिए छायादार स्थान पर खुला छोड़ देते हैं ताकि जीवाणु की एक पतली परत बीज पर बन जाए। *राइजोबियम* से उपचारित बीज कभी भी धूप में नहीं सुखाना चाहिए क्योंकि जीवाणु धूप से मर सकते हैं। उपचारित बीज की बुआई शाम के समय करनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

हरी मटर की फसल में प्रथम जुताई के समय 20 टन प्रति हैक्टर के हिसाब से गोबर की खाद को भूमि की तैयारी के समय ही मिला देनी चाहिए। हरी मटर एक दलहनी फसल है। अतः इसे नाइट्रोजन की विशेष आवश्यकता नहीं होती है। हरी मटर की फसल को प्रारम्भ में 20 से 30 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति हैक्टर की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त 50 से 60 किलोग्राम फॉस्फोरस और 40 से 50 किलोग्राम पोटाश प्रति हैक्टर देना अनिवार्य है।

सिंचाई

हरी मटर की उन्नत प्रजातियों में दो सिंचाई की आवश्यकता होती है। पहली सिंचाई फूल निकलते समय बोने के 45 दिनों बाद व दूसरी सिंचाई आवश्यकता पड़ने पर फली बनते समय बोने के 60 दिनों बाद करें।

मटर की स्वस्थ फलियां एवं दाने

बुन्देलखण्ड क्षेत्र में पानी की कमी होने के कारण मुख्यत: एक ही सिंचाई के लिए पानी उपलब्ध हो पाता है।

खरपतवार नियंत्रण

फसल बोने के 35-40 दिनों तक फसल को खरपतवारों से बचाना आवश्यक है। आवश्यकतानुसार एक या दो निराई-गुड़ाई बोने के 30-35 दिनों बाद करनी चाहिए। रासायनिक विधि से खरपतवार नियन्त्रण करने के लिए 1 कि.ग्रा./है. फ्लूक्लोरेलिन; बेसालिन की मात्रा का 800-1000 लीटर पानी में घोल बनाकर में छिड़काव करें।

कीट व रोग का प्रबंधन

फली छेदक

- यह हरी मटर का मुख्य कीट है। यह कीट हरी मटर की फसल को सर्वाधिक हानि पहुचाता है। इस कीट की इल्लियां फली में छेद करके हरे दाने को खा जाती हैं। जिससे फसल को अधिक मात्रा में नुकसान होता है।
- इस कीट की रोकथाम के लिए ट्राइजोफास 1.00 मिली/ली. या प्रोफेनोफास 0.75-1 मिली/ली. पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए।

चूर्णिल फफूंद

- यह रोग कवक जनित रोग है और यह *इरीसाइफी पॉलीगोनी* नामक फफूंदी से होता है। यह रोग अधिकतर नम मौसम मे लगता है। रोग का प्रभाव प्रारम्भ मे पत्तियों पर सफेद चूर्ण जैसी संरचना के रूप मे दिखाई पड़ता है।
- अगेती फसलों का चयन करें और उपयुक्त समय पर बुआई करें और साथ ही रोगरोधी फसलों का चयन करें जैसे- अर्का अजीत।
- इस रोग की रोकथाम के लिए 3 कि.ग्रा. घुलनशील गंधक या सल्फेट को 1000 ली. पानी में घोलकर एक हैक्टर में छिड़काव करें।

गेरुई रोग

- हरी मटर का यह रोग *युरोमासीस फेबी* नामक फफूंदी से होता है। यह रोग मटर के मुख्य रोगों में से एक है। यह रोग मटर को कभी-कभी अधिक क्षति पहुंचाता है।
- बीज को उपचार करके बुआई करनी चाहिए। रोग की रोकथाम के लिए डाइथेन एम 45 या डाइथेन जेड 78 के 2.25 कि.ग्रा. को 1000 ली. पानी में घोलकर/ हैक्टर का छिड़काव करें।

हरी फली की तुड़ाई (कटाई)

सामान्यता हरी मटर में 3-4 तुड़ाई की जाती हैं। हरी मटर की फली की तुड़ाई सुबह भोर में या संध्या काल में करते हैं। इससे इसकी गुणवत्ता पर कोई प्रभाव नही पड़ता है। हरी मटर की फली की तुड़ाई 6-8 दिनों के अन्तराल पर करते हैं। हरी मटर की परिपक्वता मापने के लिए टेन्ड्रोमीटर का प्रयोग करते हैं।

उपज

सामान्यता हरी मटर की अगेती किस्मों की उपज 3-4 टन/हैक्टर और मध्यम वर्गीय किस्मों की 6-7 टन/हैक्टर प्राप्त कर सकते हैं।

भण्डारण

हरी मटर की फली को दो सप्ताह के लिए भण्डारण कर सकते हैं। इसके लिए 32°C फॉरेनहाइट तापमान और 85-90 प्रतिशत आर्द्रता की आवश्यकता होती है। ■

मखाना उत्पादन से संभावनाएं

ज्ञान चंद्र, परमानंद प्रभाकर और **रवि शंकर कुमार**

मखाना एक जलीय फसल है जिसका उत्पादन मुख्य रूप से उत्तर बिहार, बंगाल तथा असोम राज्य में किया जाता है। मखाने की खेती ऐसे जल जमाव वाले क्षेत्रों में की जाती है जिसका उपयोग लगभग किसी भी फसल उत्पादन के लिए नहीं किया जा सकता है। अतः यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि मखाना किसानों के लिए एक वरदान है। मखाना काफी सेहतमंद होता है तथा औषधीय गुणों से भरपूर होता है। मखाना से तरह-तरह के स्वादिष्ट व्यंजन बनाए जाते हैं। देश के मखाना उत्पादन का लगभग 80 प्रतिशत भाग बिहार से आता है तथा यहाँ के जल जमाव वाले क्षेत्र मधुबनी, दरभंगा, सीतामढ़ी, सहरसा, कटिहार, पूर्णिया, समस्तीपुर, सुपौल, किशनगंज एवं अररिया के किसानों की आजीविका का मुख्य स्रोत हैं। मखाना की खेती के क्षेत्र को काफी बढ़ाया जा सकता है साथ ही साथ यंत्रीकरण कर उत्पादन, उत्पादकता एवं आमदनी में काफी हद तक वृद्धि की जा सकती है। आज भी मखाना की खेती परंपरागत विधि से ही की जाती है एवं उत्पादन उपरान्त प्रसंस्करण भी घरेलू विधि पर ही आधारित है। अतः मखाना की खेती, प्रसंस्करण एवं व्यापार में आधुनिकीकरण की अपार संभावनाएँ हैं। किसान उत्पादकता समूह की स्थापना कर किसान उचित लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

मखाने की खेती दो तरह से की जाती है, एक विधि जिसमें आर्द्र भूमि क्षेत्र का उपयोग किया जाता है। इस भूमि में मार्च से सितम्बर तक खेती की जाती है तथा उसके बाद बोरो/धान की खेती की जाती है। इस विधि में खेत में हमेशा 1.5 से 2 फीट पानी रखा जाता है तथा मखाने का बीचरा (छोटा पौधा) एक-एक करके बहुत ही सावधानी से लगाया जाता है। दूसरी विधि में, मखाने की खेती प्राकृतिक तालाब/जल जमाव वाले क्षेत्र में की जाती है। इस विधि में पिछले साल के बचे हुए बीज से ही पौधा तैयार होता है, अलग से बीचरा लगाने की जरूरत नही पड़ती है।

मखाने की उन्नत किस्म-सबौर मखाना-1, स्वर्ण बैदही की उत्पादन क्षमता 32 क्विंटल/है. गुरमी (बीज) है। किसान अभी भी पुरानी परम्परागत किस्मों का उत्पादन कर रहे हैं, जिसकी उत्पादन क्षमता कम है। नई प्रमेद के मखाना के बीज से ज्यादा मात्रा में लावा (खाने वाला मखाना) प्राप्त किया जाता है। 100 किलोग्राम मखाने के बीज से लगभग 55 कि.ग्रा. लावा प्राप्त किया जाता है। एक हैक्टर मखाने की खेती में लगभग 50,000/- रुपये खर्च होता है तथा शुद्ध आमदनी 90,000/- तक प्राप्त की जा सकती है। मखाना सह मछली पालन को अपनाकर किसान इस आमदनी को लगभग डेढ़ से दोगुना तक कर सकते हैं। सरकार ने मिथिला मखाना को भौगोलिक संकेतक (जीआई) टैग प्रदान किया है। इससे किसानों को अधिकतम मूल्य प्राप्त करने में मदद मिलने की उम्मीद है। भौगोलिक संकेतक (जीआई टैग एक संकेतक है, जिसका उपयोग मिश्रित भौगोलिक क्षेत्र में उत्पादन होने वाली प्रमुख विशेषताओं वाले उत्पादों को पहचान देने के लिए किया जाता है। इससे पूर्व बासमती चावल, दार्जिलिंग चाय, मैसूर सिल्क, कश्मीरी केसर आदि को यह जीआई टैग प्रदान किया जा चुका है तथा इससे किसानों को लाभ प्राप्त हो रहा है।

मखाना प्रसंस्करण

मखाना प्रसंस्करण में सामान्य तौर पर, कटाई के बाद की विभिन्न प्रक्रिया शामिल हैं, जैसे धूप में सुखाना, आकार की ग्रेडिंग, प्री-हीटिंग, पॉपिंग, पॉलिशिंग, ग्रेडिंग तथा पैकेजिंग आदि।

सफाई: परिपक्व ताजे मखाने के बीज को पहले साफ किया जाता है और बीज के अलावा कई अन्य पदार्थों को हटा दिया जाता है। इसके बाद फिर गंदगी एवं कीचड़ को हटाने के लिए धोया जाता है।

धूप में सुखाना और बीजों का भंडारण: साफ किए गए मखाने के बीजों को फिर एक चटाई या सीमेंट के फर्श पर 2-3 घंटे के लिए तेज धूप में सुखाया जाता है ताकि अस्थायी भंडारण और परिवहन प्रक्रिया के लिए नमी को लगभग 31 प्रतिशत तक

मखाना उत्पादन में महिलाओं का अहम योगदान

सहायक प्राध्यापक, मात्स्यिकी महाविद्यालय, किशनगंज-855107 (बिहार)

विपणन में उन्नत प्रणाली

मखाने का बाजार मूल्य अच्छा-खासा है परन्तु किसानों को बहुत अच्छा मूल्य नहीं मिल पाता है, इसके निम्न कारण हैं:-

- बाजार में, प्रसंस्करित मखाने की मांग है और मखाना प्रसंस्करण की सुविधा हर जगह उपलब्ध नहीं है। अत: छोटे किसानों को अपना कच्चा मखाना बिचौलिए को बेचना पड़ता है, जहाँ उन्हें कम कीमत मिलती है।
- मखाना के मूल्य में बढ़ोतरी वैल्यू संर्वधन द्वारा संभव है, जिसका लाभ, मुख्यत: प्रसंस्करण उद्योग को मिलता है और किसान इस लाभ से वंचित रह जाते हैं।

समाधान

- मखाने के प्रसंस्करण हेतु, प्रोसेसिंग मिल, उत्पादन क्षेत्र में स्थापित होने चाहिए, ताकि छोटे किसानो को अपना कच्चा मखाना बिचौलियों को न बेचना पड़े।
- कच्चे मखाने का विपणन या तो एफपीओ द्वारा या फिर कोऑपरेटिव मार्केटिंग द्वारा हो, जिसमें किसानों के हितों को सर्वाधिक ध्यान में रखा जाता है।

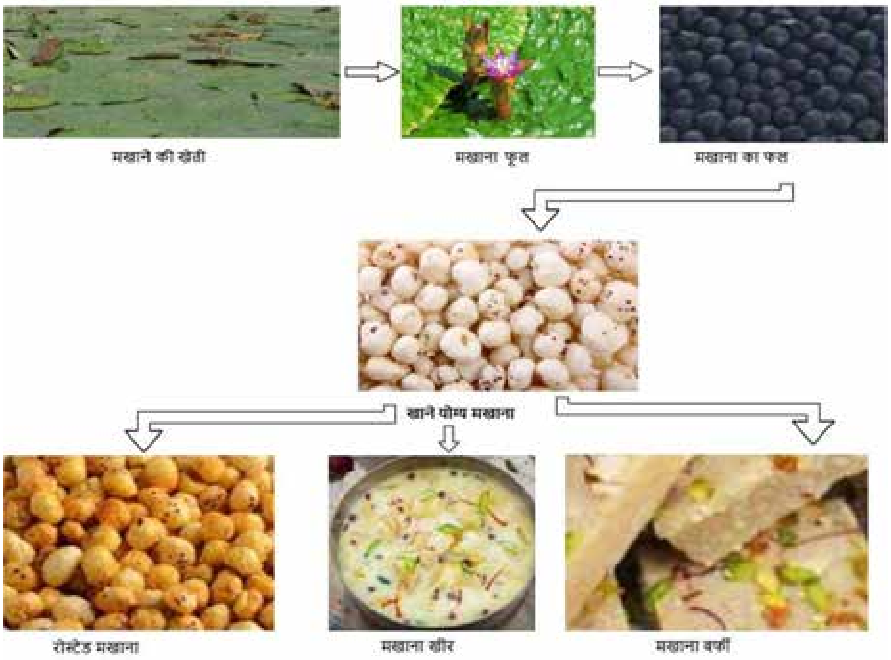

मखाने की खेती एवं इससे बने विभिन्न खाद्य उत्पाद

सारणी: भारत से मखाना के निर्यात का विवरण

आयातक देश	मात्रा (मीट्रिक टन. में)	मूल्य (मिलियन रुपये में)	कुल निर्यात में प्रतिशत हिस्सेदारी
संयुक्त राज अमेरिका	3069.21	479.04	34.57
संयुक्त अरब अमीरात	2090.62	159.87	11.54
नेपाल	863.52	134.90	9.73
ब्रिटेन	613.21	74.67	5.39
ऑस्ट्रेलिया	595.44	66.65	4.81
कतर	597.74	45.40	3.28
बांग्लादेश	196.81	42.90	3.10
सऊदी अरब	563.13	42.23	3.05
मालदीव	181.24	40.18	2.90
कनाडा	250.52	37.66	2.72

कम किया जाता है। बीजों का भंडारण परिवेशी परिस्थितियों में किया जाता है। आमतौर पर बीजों को प्रसंस्करण से पहले 20-25 दिनों के लिए भंडारित किया जाता है। भंडारण के दौरान नियमित अंतराल पर पानी का छिड़काव, उन्हें ताजा रखने और बीज की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए किया जाता है।

कच्चे मखाना का विपणन

आकार ग्रेडिंग: धूप में सुखाए गए बीजों को छननी के माध्यम से उनके आकार के अनुसार 5 से 7 ग्रेड में वर्गीकृत किया जाता है। मखाने के बीज की ग्रेडिंग से भुनने के दौरान प्रत्येक नट को एकसमान रूप से गर्म करने की सुविधा मिलती है और यह प्रसंस्करण की दक्षता को बढ़ाता है।

पूर्व हीटिंग: धूप में सुखाए गए बीजों को आमतौर पर मिट्टी के घड़े या लोहे की कड़ाही में आग पर रखकर और लगातार हिलाते हुए गर्म किया जाता है। पैन की सतह का तापमान लगभग 250 डिग्री सेल्सियस -3000 डिग्री सेल्सियस होता है और पैन

की पूरी क्षमता पर आवश्यक समय लगभग 5 से 6 मिनट होता है। गर्म करने के बाद नमी की मात्रा लगभग 20 प्रतिशत तक कम हो जाती है।

तड़का: पहले से गर्म बीजों को 48-72 घंटे की अवधि के लिए परिवेशी स्थिति में भंडारण करना बीजों के तड़के के रूप में जाना जाता है। बीजों का तड़का इस उद्देश्य से किया जाता है ताकि बीज के सख्त कोट के भीतर गुठली को ढीला किया जा सके।

रोस्टिंग और पॉपिंग: यह मखाना प्रसंस्करण का सबसे महत्वपूर्ण कार्य है। लगभग 300 ग्राम पहले से गर्म और तड़के वाले बीज को लगातार हिलाते हुए 2900 डिग्री सेल्सियस से 3400 डिग्री सेल्सियस सतह के तापमान पर आग पर एक परत में कच्चा लोहे के बर्तन में भूना जाता है। लगभग 1.5 से 2.2 मिनट के बाद, बीज के भुनने से एक कर्कश आवाज सुनाई देती है। इसके बाद उसमे से पांच से सात भुने हुए बीजों को हाथ से जल्दी से निकालकर सख्त सतह पर रखकर लकड़ी के हथौड़े से उन पर अचानक प्रभावी बल लगाया जाता है। जैसे ही कठोर खोल टूटता है, लावा विस्तारित रूप में बाहर निकलता है, जिसे मखाना पॉप या लावा कहा जाता है। कच्चे माल की गुणवत्ता के आधार पर मखाने की उपज कच्चे बीज के वजन के आधार पर 35-40 प्रतिशत से भिन्न होती है।

कुटीर उद्योग आधारित मखाना प्रसंस्करण इकाई

चमकाना: यह बांस की टोकरियों में आपस में मखाना पॉप या लावा को रगड़कर किया जाता है। पॉलिश करने से मखाने में अधिक सफेदी और चमक आती है।

ग्रेडिंग: उत्पादक स्तर पर, पॉप्ड मखाना के लावा को आमतौर पर दो ग्रेडों में वर्गीकृत किया जाता है- लावा और थुरी। लावा फूला हुआ और लाल रंग के धब्बों के साथ सफेद होता है, जबकि थुरी अर्ध-पॉप्ड, सख्त और लाल रंग का होता है।

उत्पादन एवं विपणन समाधान

मखाना उत्पादन एवं विपणन में किसानों को बहुत सारी चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। हाल के दिनों में सरकार द्वारा विभिन्न योजनाओं से किसानों को लाभ पहुँचाया जा रहा है। मखाना उत्पादन एक हुनर भरा कार्य है, तथा एक विशेष वर्ग ही मखाना उत्पादन से जुड़े कार्य जैसे पौधे की रोपाई, कटाई एवं प्रसंस्करण कार्य कर रहे हैं और यह कार्य भी परम्परागत तरीके से ही किया जा रहा है।

प्रशिक्षण के माध्यम से नये लोगों को भी जोड़ा जा सकता है तथा तकनीक के माध्यम से मखाना उत्पादन से जुड़े कार्य को आसान बनाया जा सकता है। किसान लीज पर जमीन लेकर मखाना उत्पादन का कार्य कर रहे हैं तथा परम्परागत बीजों का उत्पादन कर रहे हैं। जरूरत इस बात की है कि किसानों के बीच नये बीज एवं पूंजी उपलब्ध करवाई जाये। ज्यादा से ज्यादा मखाना आधारित किसान उत्पादकता समूह का गठन कर किसानों को उत्पादन एवं विपणन से जोड़ा जा सकता है। किसान राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक तथा अन्य सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाओं की मदद से उत्पादकता समूह का गठन कर लाभ उठा सकते हैं।

पर्यावरण संरक्षण एक बड़ी चुनौती है, जल अधिग्रहण क्षेत्र में काफी जैव विविधतायें हैं। हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि मखाने की खेती के कारण जैव विविधता पर किसी भी तरह का प्रतिकूल प्रभाव न पड़ें। साथ ही साथ अन्तर्राष्ट्रीय महत्व की आर्द्र-भूमि पर रामसार संधि का भी ध्यान रखा जाये। अत: मखाना एक स्वास्थ्यवर्धक आहार है, जिसका सेवन सभी कर सकते हैं। मखाना उत्पादन किसानों की आय दोगुनी करने में अहम भूमिका निभा सकता है।

पैकेजिंग: स्थानीय बाजारों के लिए साधारण गनी बैग जबकि दूर के बाजारों के लिए पॉलिथीन के अस्तर के साथ गनी बैग का उपयोग पॉप्ड मखाना पैक करने के लिए किया जाता है। एक क्विंटल चीनी की क्षमता वाली एक बोरी में 8 से 9 कि.ग्रा. अच्छी गुणवत्ता वाले मखाने को पैक किया जा सकता है।

विपणन: मखाना, भारत तथा विश्व के अनेक स्थानों में, खाद्य उत्पादों के तौर पर शामिल होता रहा है। भारत में इसका प्रयोग, स्नैक्स के साथ-साथ पकवान और मिठाई बनाने में भी किया जाता है, इस कारण बाजार में मखाने की मांग हमेशा बनी रहती है। बाजार में मांग का एक दूसरा कारण यह भी है कि इसका उत्पादन क्षेत्र सीमित है। भारत में, इसका सबसे अधिक 80% से 90% उत्पादन बिहार में होता है। मखाने की मांग अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में भी तेजी से बढ़ी है। भारत से मखाने का निर्यात अमेरिका, ब्रिटेन, ऑस्ट्रेलिया, सऊदी अरब, कतर, बांग्लादेश, कुवैत, ओमान, जापान इत्यादि देशों में होता है। हालाँकि भारत में मखाने का निर्यात, उत्पादन के लिहाज से काफी कम है। इसका मुख्य कारण, मखाना की घरेलू बाजार में मांग, अधिक होना है।

घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय बाजार में मांग होने के कारण, मखाना का भविष्य काफी उज्जवल है और समय के साथ विपणन के तरीकों में होने वाले बदलाव मखाना के किसानो के लिए लाभकारी सिद्ध होंगे। ■

बेर एवं छिद्रक यंत्र के लाभ

कोमटिनेनी भरत कुमार[1], **उत्कर्ष द्विवेदी**[2], **सांवल सिंह मीना**[3] और **मन मोहन देव**[4]

बेर (*जिजिफस मॉरीशियस*) रैम्नेसी परिवार से संबंधित है। यह भारत-चीन क्षेत्र के प्राचीन फलों में से एक है। यह फल प्राचीन समय से भारतीय उपमहाद्वीप में उगाया जा रहा है। इसकी लगभग 40 प्रजातियों से युक्त जीनस जिजिफस, दुनिया के उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में वितरित किया जाता है। बेर की कुछ अन्य प्रजातियाँ जैसे जेड न्यूमुलेरिया और जेड. रोटुन्डिफोलिया भी भारतीय उपमहाद्वीप में पाए जाते हैं। जेड. न्यूमुलेरिया मुख्य रूप से दुनिया के समशीतोष्ण भागों में उगाया जाता है। भारतीय बेर के वृक्ष छोटे से लेकर मध्यम आकार के साथ शाखाओं वाले फैले हुए होते हैं। यह प्रतिकूल मिट्टी और जलवायु परिस्थितियों के लिए व्यापक अनुकूलन क्षमता वाला सबसे कठोर फल वाला वृक्ष है। इसमें जेरोफाइटिक लक्षण प्रदर्शित होते हैं और इसकी खेती उष्णकटिबंधीय एवं उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों के अधिकांश सीमांत पारिस्थितिकी तंत्र में सफलतापूर्वक की जा सकती है। पेड़ में एक गहरी जड़ प्रणाली होती है, जो बड़ी संख्या में मिट्टी के प्रकारों पर अच्छी प्रतिक्रिया देती है। इसकी खेती के लिए फलों के पौधों में सबसे कम देखभाल की आवश्यकता होती है, इसलिए बेर के पेड़ व्यापक संसाधन विहीन क्षेत्रों के पुनर्वास के लिए उपयुक्त होते हैं। बेर की व्यापक अनुकूलन क्षमता का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि यह विभिन्न देशों में विपरीत पर्यावरणीय परिस्थितियों में भी सरलतापूर्वक उगाया जा सकता है।

बेर एक मौसमी फल है, जिसके बीज और गूदे का अलग-अलग उपयोग होता है। एक तरफ जहां बेर के फल के बीज औषधीय मूल्यों से भरपूर हैं। इसका उपयोग कई प्रकार के रोगों के इलाज के लिए किया जा सकता है, जैसे- कैंसर, नींद संबंधी विकार, गैस की समस्या, अनिद्रा और कब्ज आदि। बेर के बीज

[1]शोध छात्र; [2]शोध छात्र, फार्म मशीनरी एवं पॉवर इंजीनियरिंग विभाग, सीएयू, सीएईपीएचटी, रानीपूल सिक्किम; [3]सह-प्राध्यापक, फार्म मशीनरी और पावर इंजीनियरिंग विभाग, महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान; [4]फसल उत्पादन प्रभाग, आईसीएआर-भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान कानपुर, उत्तर प्रदेश

सारणी 1. बेर फल की पोषण संरचना (ताजा परिपक्व वजन के आधार पर)

संघटक	मात्रा (प्रति 100 ग्राम)	संघटक	मात्रा (प्रति 100 ग्राम)
नमी (ग्राम)	81.6-83.0	कैल्शियम (मिलीग्राम)	25.6
प्रोटीन (ग्राम)	0.8	फॉस्फोरस (मिलीग्राम)	26.8
वसा (ग्राम)	0.07	आयरन (मिलीग्राम)	0.76-1.8
फाइबर (ग्राम)	0.60	कैरोटीन (मिलीग्राम)	0.021
कार्बोहाइड्रेट (ग्राम)	17.0	थियामिन (मिलीग्राम)	0.02-0.024
कुल शर्करा (ग्राम)	5.4-10.5	राइबोफ्लेविन (मिलीग्राम)	0.02-0.038
अपचायक शर्करा (ग्राम)	1.4-6.2	नियासिन (मिलीग्राम)	0.7-0.873
गैर-अपचायक शर्करा (ग्राम)	3.2-8.0	साइट्रिक एसिड (मिलीग्राम)	0.2-1.1
ऐश (ग्राम)	0.3-0.59	एस्कॉर्बिक एसिड (मिलीग्राम)	65.8-76.0
पेक्टिन (प्रतिशत शुष्क आधार)	2.2-3.4	फ्लोराइड (पीपीएम)	0.1-0.2

गुणों से भरपूर बेर

बेर और सेब के पोषक तत्वों की तुलना से पता चलता है, कि बेर में सेब की तुलना में प्रोटीन, खनिज पदार्थ, कैल्शियम, फॉस्फोरस, कैरोटीन और विटामिन की मात्रा अधिक होती है। बेर को 'शुष्क क्षेत्र का सेब' भी कहा जाता है। यह आसानी से पचाया जा सकता है। समग्र रूप से बेर के वृक्ष के बहुउद्देशीय उपयोग होते हैं। पत्तियों का उपयोग मवेशियों और ऊँटों के चारे के रूप में और टस्सर रेशम के कीटों को खिलाने के लिए किया जाता है। बेर का वृक्ष लाख के कीटों के लिए मेजबान के रूप में भी उपयोगी हो सकता है, छाल का उपयोग टैनिंग उद्योग में किया जाता है, लकड़ी का उपयोग कोयला आदि बनाने के लिए किया जाता है। बेर के फल के प्रसंस्करण की भी बहुत गुंजाइश है, क्योंकि इससे चटनी, सूखे बेर, मुरब्बा, बेर कैंडी, स्क्वैश, पेय और जैम जैसे कई उत्पाद तैयार किए जा सकते हैं। बेर के पके फल को चाशनी में डिब्बाबंद करके बाजारों में बिक्री के लिए भी प्रयोग किया जा सकता है।

का उपयोग किया जाता है और गूदा बर्बाद हो जाता है। बेर का गूदा सीधे तौर पर लोगों द्वारा खाने में प्रयोग किया जाता है, जो कई प्रकार के रोगों से लड़ने की शक्ति प्रदान करता है। विटामिन सी की कमी से होने वाले रोगों से लड़ता है, रक्त संचार को नियंत्रित करता है, तनाव और चिंता को कम करता है, हड्डियों की ताकत में सुधार करता है, बालों के विकास को बढ़ाता है, वजन को नियंत्रित करता है और रोग प्रतिरक्षा शक्ति को भी बढ़ाता है। इस प्रकार ज्यादातर लोग बेर के फलों के गूदे का ही सेवन करते हैं।

बीज और गूदे को सही तरीके से अलग करने के लिए एक पंचिंग प्रकार का बेर फल छिद्रक यंत्र मशीन का प्रयोग किया जा सकता है। यह यंत्र बेर और बीज की होने वाली बर्बादी को कम करने में मददगार साबित हो सकता है।

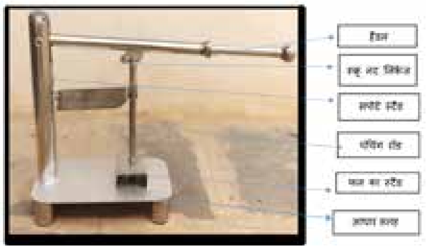

विकसित हस्तचालित बेर छिद्रक यंत्र

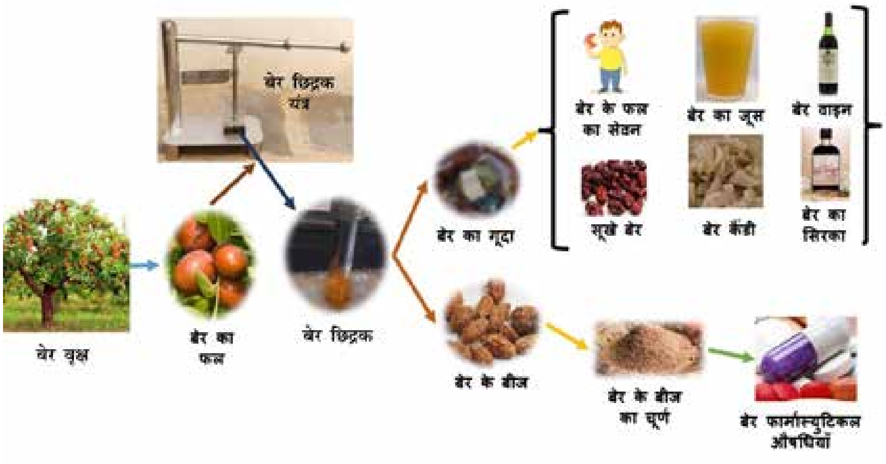

बेर में छिद्रक यंत्र उपरांत प्रसंस्करण के विभिन्न चरण

बेर का फल जनवरी से बाजार में आता है और अप्रैल के मध्य तक जारी रहता है। यह वह अवधि है, जब व्यावहारिक रूप से कोई अन्य ताजा फल उपलब्ध नहीं होता है, विशेष रूप से मार्च एवं अप्रैल के महीनों के दौरान नीबूवर्गीय फलों की चरम सीमा समाप्त हो जाती है और अंगूर एवं आम तैयार नहीं होते हैं। सिर्फ बेर का फल ही बाजार में उपलब्ध होता है और वह भी सस्ते दाम पर, इसलिए यह एक लाभदायक उद्यम साबित हो सकता है।

बेर के फलों की किस्में

भारत में बेर फल की कई किस्मों की खेती की जाती है। सबसे लोकप्रिय व्यावसायिक किस्मों में से कुछ इस प्रकार हैं, जैसे- उमरान, कराका, सनौर-2, गोला, छुहारा, इलाइची, मेहरून और सेब आदि।

फल की अवस्थाएँ

बाजार में आमतौर पर दो प्रकार के बेर फल पाए जाते हैं:

- अपरिपक्व बेर फल
- परिपक्व बेर फल

इनमें से परिपक्व बेर फलों को भौतिक गुणों के मापन के लिए माना जाता है।

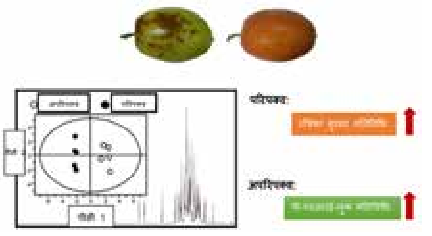

बेर फल की अवस्थाएँ

बेर फल छिद्रक यंत्र

बेर छिद्रक यंत्र में फल को दबाने के लिए रॉड, फल को रखने का स्थान और संचालित करने के लिए एक हैंडल शामिल है। एक चौकोर आकार के प्लेटफॉर्म पर आंतरिक रूप से घुमावदार किनारे वाला छेद प्रदान किया जाता है जहां प्लंजर ठोस बेलनाकार रॉड से बना होता है जो चलते हुए हैंडल से जुड़ा होता है।

फल को सीट में रखा जाता है और फल को छेदने के लिए हैंडल का उपयोग किया जाता है। जहां सीट के नीचे रखे छेद के माध्यम से बीज को आसानी से निकाला जा सकता है। वहीं मशीन को बनाने के लिए अच्छे ग्रेड के स्टेनलेस स्टील का प्रयोग किया जाता है। स्टेनलेस स्टील संक्षारण प्रतिरोधी होती है, कम रखरखाव भी इसे कई अनुप्रयोगों के लिए एक आदर्श उत्पाद बनाता है। इसके प्रयोग से मशीन के वजन को कम एवं आयु मे वृद्धि हुई है।

बेर के फलों और बीजों के भौतिक गुणों के आधार पर दवा उद्योग में बीजों और गूदे की बर्बादी को कम करने के लिए बेर फल छिद्रक यंत्र को डिजाइन और विकसित किया गया था। बेर के फलों की लंबाई, चौड़ाई, मोटाई, ज्यामितीय माध्य व्यास, अंकगणितीय माध्य व्यास, गोलाकारता और सतह क्षेत्र का अधिकतम मान 62.34 मिमी, 16.68 मिमी, 10.12 मिमी, 21.91 मिमी, 29.71 मिमी, 0.35 और 1508 मिमी थी। जबकि बीजों के लिए क्रमशः 8.73 मिमी, 3.89 मिमी, 6.09 मिमी, 5.97 मिमी, 6.31 मिमी, 0.67 और 111.73 मिमी थी।

फलों के गूदे की बर्बादी के प्रबंधन हेतु विकसित फल छिद्रक यंत्र के प्रदर्शन पैरामीटर 1.89% से 8.62% तक भिन्न थे और दक्षता 91.38% से % से 98.11% तक भिन्न थी। ऐसा फल और बीज के आकार के एक समान न होने के कारण होता है। छिद्रक यंत्र के परिणाम औद्योगिक उपयोग के लिए अत्यधिक बेहतर हैं। यह मशीन वैज्ञानिकों, इंजीनियर, नीति निर्माताओं, निर्माताओं और प्रगतिशील किसानों के लिए फायदेमंद हो सकती है। ■

मिर्च में ब्लैक थ्रिप्स का समन्वित कीट प्रबंधन

अजीत प्रताप सिंह[1], संजय कुमार सिंह[2], और कुलदीप श्रीवास्तव[3]

तेलंगाना राज्य के मिर्च उत्पादक क्षेत्रों में बहुभक्षी प्रजाति के ब्लैक थ्रिप्स, थ्रिप्स परविस्पिनस (कर्णी), (थाईसेनोप्टेरा: टेरेब्रांटिया: थ्रिपिडे) का भारतवर्ष मे प्रथमत: विनाशकारी प्रकोप देखा गया। यह भारत के मूल थ्रिप्स कीट (सिर्टोथ्रिप्स डॉर्सालिस) से अधिक आक्रामक पाई गयी। ब्लैक थ्रिप्स कीट का उद्गम स्थल, थाईलैंड और अन्य दक्षिण पूर्वी एशियाई देश हैं, जहां से यह पूरे विश्व में फैला। ब्लैक थ्रिप्स द्वारा जनित टोस्पोवायरस मिर्च का प्रमुख रोग है। इस रोग की जटिल प्रकृति के कारण इनके लक्षणों को प्रारम्भ काल मे पुष्टि करना मुश्किल होता है जिसके कारण मिर्च की पूरी फसल नष्ट हो जाती है। समन्वित कीट प्रबंधन करने के लिये किसानों द्वारा हर तीसरे/चौथे दिन कीटनाशकों का छिड़काव किया जाता है। हालांकि, बार-बार रासायनिक दवाओं का छिड़काव करने के बावजूद इस कीट के नियंत्रण पर सफलता नहीं मिल पा रही है। विषैले कीटनाशकों के अत्यधिक प्रयोग के कारण निर्यात प्रभावित होते हैं। ऐसा प्रमुख रूप से किसानों मे जागरूकता की कमी के कारण हो रहा है। इस कीट के प्रबंधन के लिए कीटों का शीघ्र पता लगाने के लिए फसलों की नियमित निगरानी करके, कीट संख्या घनत्व को आर्थिक क्षति स्तर से नीचे रखने के लिए गैर-रासायनिक तरीकों का उपयोग करने के साथ ही इस आक्रामक कीट से निपटने के लिए समन्वित कीट प्रबंधन के अंतर्गत नवीन रणनीतियों को विकसित करने के लिए तत्काल कार्य करने की आवश्यकता है।

मिर्च, भारत की एक आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण नकदी फसल है। भारत दुनिया में प्रथम स्थान रखते हुए 38 प्रतिशत का उत्पादन करता है। देश में मिर्च की खेती के अंतर्गत 852 हजार हैक्टर क्षेत्र एवं कुल उत्पादन 1578 मिलियन टन है जिसकी उत्पादकता 2.4 मीट्रिक टन प्रति हैक्टर है। मिर्च की खेती के लिए प्रति हैक्टर 2-3 लाख रुपये के बीच निवेश की आवश्यकता होती है। देश में कुल उपज की 37 प्रतिशत पैदावार केवल आंध्र प्रदेश से प्राप्त होती है। इस फसल के उत्पादन को प्रभावित करने वाले कीट ब्लैक थ्रिप्स

ब्लैक थ्रिप्स के प्रकोप का प्रभाव

रोगों का संचारण
- टोस्पोवायरस, (पत्तियों का मुड़ना) के लिए वाहक के रूप में कार्य करते हैं। ये पौधों की गंभीर क्षति का कारण बनते हैं, तत्पश्चात अतिसंवेदनशील पौधों को टोस्पोवायरस से संक्रमित करते हैं।

प्रकाश संश्लेषण में कमी
- कीट द्वारा लगातार क्षति करने से प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया बाधित होती है, जिससे विकास क्षमता सीमित हो जाती है।

फलों को क्षति
- पौधों पर अक्सर विकृति निशान और समय से पहले फूल गिर जाते हैं, रस चूसने के कारण फल की समग्र गुणवत्ता के साथ बाजार मूल्यों मे कमी पायी जाती है।

[1]मुख्य तकनीकी अधिकारी, [3]प्रधान वैज्ञानिक (कृषि कीट विज्ञान) भाकृअनुप -भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश); [2]प्रधान वैज्ञानिक (उद्यान); भाकृअनुप-केंद्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, रहमानखेड़ा, डाकघर काकोरी, लखनऊ (उत्तर प्रदेश)

का प्रकोप निरंतर बढ़ता जा रहा है। इससे न केवल उपज में कमी आती है, बल्कि फसल के पूर्णतः नुकसान से किसानों को भारी हानि का सामना भी करना पड़ता है। इस कीट का समय से पूर्व समन्वित प्रबंधन भारी नुकसान से बचाने में लाभदायक सिद्ध हो सकता है।

ब्लैक थ्रिप्स की पहचानः अन्य थ्रिप्स प्रजातियों की तुलना में आकार में ये थोड़े बड़े होते हैं, शरीर गहरे भूरे से काले रंग का जिनकी लंबाई लगभग 1-2 मि.मी. होती है। इनके काले शरीर पर पतले, लम्बी आकृतियों के साथ पंख झिल्लीदार होते हैं। इसका उदर लम्बा, पतला एवं 11 खंडों में खंडित होता हैं।

सामान्यतः वयस्क मादा का आकार वयस्क नर से बड़ा होता है।

हानि की प्रकृतिः इस कीट के वयस्क और शिशु कोमल पत्तियों, फूलों और बढ़ती हुई टहनियों का रस चूसते हैं। इसका प्रकोप शुष्क मौसमों मे अधिक होता है। मिर्च और अन्य फसलों में ब्लैक थ्रिप्स मुख्य रूप से फसलों में फूल आने की अवस्था को प्रभावित करती है। नवीन पत्तियों, कलियों और फलों के रस चूसने के परिणामस्वरूप पत्तियों का रंग कांसे जैसा हो जाता है, जो रस निष्कर्षण के कारण होता है।

अत्यधिक फूलों और कलियों का रस चूसने के कारण फूल और कलियां समय से पहले झड़ जाते हैं। इसके साथ ही पौधे की विकृति होने पर वृद्धि रुकने के कारण पौधे बौने और कमजोर नजर आने लगते हैं। यह कीट टोस्पोवायरस को प्रसारित करता है।

सारणी : ब्लैक थ्रिप्स का समन्वित कीट प्रबंधन

तकनीक	**विवरण**
नियमित निगरानी द्वारा	• संक्रमण के प्रारंभिक लक्षणों जैसे पत्तियों का चांदी जैसा होना, विकृत पत्ते या फलों पर पड़े निशानों का शीघ्र पता लगाकर वयस्क थ्रिप्स की प्रारंभिक चेतावनी और पकड़ने के लिए नीले चिपचिपे फंदे को स्थापित करें। यह थ्रिप्स की निगरानी करने की सबसे सरल और उत्तम विधि है। यह मिर्च की फसल में अंडे देने की प्रक्रिया को भी कम कर देती है। निगरानी के लिए 30 से 35 फंदे/हैक्टर स्थापित करें। साप्ताहिक अंतराल पर पुराने फंदे को नए फंदे से बदल दें, फंदे का आकार 15×20 सें.मी. या 30×20 सें.मी. रखना उचित होता है। फंदे को सदैव फसल की ऊंचाई के आधार पर थोड़ा ऊंचा स्थापित करें।
कीट और रोग प्रतिरोधी प्रजातियां लगाकर	• कीट और रोग प्रतिरोधी कम अवधि वाली किस्मों का चयन करें, बीज को सदैव कीटनाशकों से उपचारित करने के उपरांत ही नर्सरी की बुआई करें। थ्रिप्स के प्रकोप की गंभीरता को कम करने के लिए बुआई/रोपाई की तारीख में बदलाव भी कर सकते हैं।
कर्षण क्रियाओं द्वारा	• ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करें, फसलचक्र अपनायें, कतार से कतार की दूरी 60 सें.मी. और पौध से पौध की दूरी 30 सें.मी. रखें। • ज्वार/मक्का/बाजरा आदि जैसी लंबी बढ़ती फसलों की 2-3 पंक्तियाँ सीमा पर लगायें। सीमा फसलों की बुआई मिर्च के पौध रोपण से 15-20 दिन पहले करें। • मिर्च की हर दस कतार के बाद लोबिया की तीन कतार लगायें। • खेत के मेड़ों के आस-पास मौजूद पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस, क्लियोम विस्कोसा, प्रोसोपिस प्रजाति, लैंटाना कैमारा, जंगली सोलनेसी प्रजाति आदि खरपतवारों को उखाड़कर नष्ट कर दें। ये थ्रिप्स के लिये वैकल्पिक पोषक के रूप में आश्रय प्रदान करते हैं।
उचित सिंचाई द्वारा	• भूमिगत सिंचाई के स्थान पर फव्वारा सिंचाई प्रणाली को अपनाएं। • मिट्टी की नमी में 60% की कमी होने पर सिंचाई करें। • शीत ऋतु में 20 दिनों के अंतराल पर नेफ्थलीन एसिटिक एसिड का 1 मिली प्रति 10 लीटर पानी में मिलाकर कम से कम दो से तीन बार छिड़काव करें।
यांत्रिक नियंत्रक द्वारा	• गंभीर रूप से संक्रमित शीर्ष प्ररोहों को तोड़कर तथा संक्रमित पौधों को उखाड़ने के उपरांत उसे गाड़कर या जलाकर नष्ट कर दें।
जैव कीट रसायनों पर बल देना (जैविक नियंत्रण)	• लाभकारी मित्र कीटों जैसे लेडीबग, लेसविंग्स, या शिकारी माइट, थ्रिप्स का भक्षण करते हैं। • अच्छी तरह से विघटित खाद (गोबर की खाद) का प्रयोग 2.50 टन/हैक्टर की दर से करें। • मेटारिजियम एनिसोप्लिया या स्यूडोमोनस फ्लोरेसेंस (दरः 2 किग्रा/टन) से समृद्ध गोबर की खाद का 25-30 टन/हैक्टर की अनुशंसित मात्रा का प्रयोग करें । • ब्यूवेरिया बैसियाना या वर्टिसिलियम लेकनाई, का 4 ग्राम प्रति लीटर या 4 मिली प्रति लीटर/(बीजाणु भारः 1×108 प्रति इकाई कॉलोनी निर्माण/ग्राम) का समान रूप से छिड़काव 7 दिनों के अंतराल पर करें। • कीट रोग जनक सूत्रकृमि (ईपीएन), स्टीनरनेमा कार्पोकैप्सी के सूत्रीकरण के लिए 10 ग्राम/लीटर की दर से फसल पर छिड़काव करें। ईपीएन का उपयोग सूर्योदय या सूर्यास्त के बाद देर शाम के समय करना चाहिये, क्योंकि ये पराबैंगनी प्रकाश की किरणों (यूवी किरणों) और उच्च तापमान के प्रति संवेदनशील होती हैं।
वानस्पतिक कीट रसायनों का उपयोग	• समुद्री खरपतवार (कप्पा फाइकसल्वारेजी) के बीज का 2 मिली/लीटर की दर से छिड़काव करें, या मिट्टी में 500 किलोग्राम नीम की खली और 1.5 टन/हैक्टर की दर से केंचुआ की खाद का प्रयोग करें। यह उपाय थ्रिप्स से पौधे में प्रतिरोधक क्षमता उत्पन्न करता है। • नीम की खली (2 मिली/लीटर) का छिड़काव 7 दिनों के अंतराल पर ब्लैक थ्रिप्स के प्रसार को प्रभावी ढंग से नियंत्रित करता है।

लाभकारी मित्र कीटों के प्रसार हेतु क्रियाएं

- रासायनिक कीटनाशकों का प्रयोग कम से कम करना चाहिए।
- भारत में मिर्च पर कार्बामेट्स, ऑर्गनोफॉस्फेट, पाइरेथ्रोइड्स कीटनाशकों (जैसे फ्लुवेलिनेट, साइफ्लुथ्रिन, आदि) के छिड़काव से बचें। ये कीटनाशक प्राकृतिक रूप से पाये जाने वाले मित्र कीटों और परागणकों के लिए अत्यधिक विषैले होते हैं, जो माइट के प्रकोप का कारण बन सकते हैं। ये ब्लैक थ्रिप्स के विरुद्ध विशेष रूप से प्रभावी नहीं हैं क्योंकि थ्रिप्स बहुत सूक्ष्म कीट होते हैं और मुड़े हुए पत्तों में छिपे रहते हैं।
- अंतिम उपाय के रूप में थ्रिप्स नियंत्रण के लिए लेबल किए गए कीटनाशकों का उपयोग करें।
- अनुशंसित सुरक्षित कीटनाशक रसायनों के उपयोग हेतु वनस्पति संरक्षण, संगरोध एवं संग्रह निदेशालय (सीआईबी और आरसी) ने मिर्च में थ्रिप्स के लिए निम्न पंजीकृत कीटनाशकों को मंजूरी दी है।
- डायफेनथियुरॉन (47%) + बिफेन्थ्रिन (9.40%) एससी घुलनशील पाउडर की 1.25 मिली/लीटर का घोल बनाकर छिड़काव करें।
- इमामेक्टिन बेंजोएट (5%) एसजी के घुलनशील दाने की 0.4 ग्राम/लीटर का पानी मे घोल बनाकर छिड़काव करें।
- सायंट्रानिलिप्रोल (10.26% ओडी) एक एंथ्रानिलिक डायमाइड कीटनाशक है, यह कीट पर डिंबनाशी (ओवीसाइडल), लार्वानाशक (ओवी-लार्विसाइडल) और वयस्कनाशी (एडल्टींसाइडल) प्रभावकारिता भी दिखाता है। कीट प्रजातियों के संपर्क में आने के कुछ घंटों के भीतर कीट आमतौर पर तेजी से आहार करना बंद कर देता है। इसकी 0.5 मिली/लीटर की मात्रा को पानी मे घोल बनाकर छिड़काव करें।
- स्पिनेटोरम (11.70% एस.सी.) का 0.9 मिली/लीटर को पानी मे घोल बनाकर छिड़काव करें। यह केवल लक्ष्य कीटों को ही मारता है और मित्र कीटों को प्रभावित नहीं करता है।
- प्रोफेनोफॉस (40% ईसी) या फेनपायरोक्सिमेट (2.5 ईसी) घुलनशील घोल की 2.0 मिली/लीटर को पानी मे घोल बनाकर छिड़काव करें। यह कीटनाशक थ्रिप्स के अंडों को समूलरूप से नष्ट कर देता है। पत्तियों की निचली और ऊपरी सतह पर मौजूद कीटों को मारता है।

सारणी : वनस्पति संरक्षण, संगरोध एवं संग्रह निदेशालय द्वारा मिर्च में ब्लैक थ्रिप्स के लिए पंजीकृत कीटनाशकों की सूची

कीटनाशक	जल की आवश्यक मात्रा	कीटनाशकों की मात्रा / हैक्टर	प्रतीक्षा अवधि
एसीफेट 15% एस.जी.	500 लीटर	790 ग्राम	7
एसिटामिप्रिड 20% एस.पी	500-600 लीटर	50-100 ग्राम	3
कार्बोफ्यूरॉन 0.3% सी.जी.	-	33.30 किलोग्राम	-
सायंट्रानिलिप्रोल 10.26 ओ.डी.	500 लीटर	600 मी.ली.	3
इमामेक्टिन बेंजोएट 0.5 एस.जी.	500 लीटर	200 ग्राम	3
इमामेक्टिन बेंजोएट 90% इ.सी	500 लीटर	375 मिली.	3
इमिडाक्लोप्रिड 70% डब्लू.एस	10 ग्राम/किलोग्राम बीज की दर से बीजोपचार करें।		
इमिडाक्लोप्रिड 30.50 एस.सी.	500 लीटर	125-150 ग्राम	5
इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल.	500-700 लीटर	125-250 मि.ली.	40
लैम्बडासाइहेलोथ्रिन 4.90 सी.एस.	500 लीटर	500 मि.ली.	5
लैम्ब्डासाइहलोथ्रिन 0.50% इ.सी.	400-600 लीटर	300 मि.ली.	5
स्पाइनोसैड 45% एस.सी.	500 लीटर	160 मिली	3
स्पाइरोटेट्रामैटल 5.31% ओ.डी.	500 लीटर	400 मिली	5
थायोमेथोक्सम 30% एफ.एस.	10 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से बीजोपचार करें।		
डायफेनथियुरॉन 47% + बिफेन्थ्रिन 9.40 एस.सी.	500 लीटर	625 मिली	7
फ्लुबेंडियामाइड 19.92% + थियाक्लोप्रिड 19.92 एस.सी.	500 लीटर	200-250 मिली	5
प्रोफेनोफॉस 40% + फेनपायरोक्सिमेट 2.5%	500 लीटर	1 लीटर	7

थ्रिप्स के शुरुआती चरण (इंस्टार) के लार्वा ही वायरस का संचारण करते हैं, वयस्क थ्रिप्स टोस्पोवायरस को ग्रहण तो कर सकते हैं, लेकिन वे उन्हें प्रसारित करने में असमर्थ होते हैं।

जीवन चक्र

इसका जीवन चक्र 6 चरणों मे पूरा होता है। मादाएं अपने अंडनिक्षेपक की सहायता से निषेचित/अनिषेचित दोनों प्रकार के अंडों को मिर्च के पौधे के ऊतकों के अंदर डालती हैं। जहां से 6-8 दिनों में उनसे शिशु (लार्वा) निकलते हैं। शिशु दो चरणों से गुजरते हैं, वयस्क चरण तक अपने विकास को पूरा करने के लिए पर्याप्त मात्रा मे पत्तियों का रस चूसते हैं।

पूर्ण विकसित शिशु 24 घंटे तक प्रीप्यूपल अवस्था से गुजरते हुए भुरभुरी मिट्टी के ऊपर प्यूपा का निर्माण करते हैं। प्यूपा अवस्था 2 से 3 दिनों की होती है। मादा अपने जीवनकाल में 55-150 अंडे देती हैं। जैसे-जैसे इनकी आबादी का विस्तार होता है, वे परिपक्व पुरानी पत्तियों की सतहों पर भी आक्रमण करते हैं।

थ्रिप्स के जीवनकाल के विभिन्न चरणों की अवधि आमतौर पर वायुमंडलीय तापमान और आर्द्रता पर निर्भर करती है। थ्रिप्स की एक वर्ष में कई पीढ़ियाँ (लगभग आठ तक) होती हैं। जब मौसम गर्म होता है, तो अंडे से वयस्क तक का जीवन चक्र 2 सप्ताह में पूरा होता है।

ब्लैक थ्रिप्स द्वारा संक्रमित पौधा

अनुकूल परिस्थितियाँ

ब्लैक थ्रिप्स के लिए 20 से 35 डिग्री सेंटीग्रेड के बीच का गर्म तापमान, आर्द्र परिस्थितियाँ, (60% से अधिक उच्च आर्द्रता) इनके विकास और प्रसार को बढ़ावा देती हैं।

समन्वित कीट प्रबंधन के अंतर्गत महत्वपूर्ण सुझाव

- कीटों की सटीक पहचान करने के उपरांत ही कीट नियंत्रण के लिये अपना लक्ष्य निर्धारित करें, यह मूल्यांकन करें कि कौन सी नियंत्रण नीति कारगर रहेगी।
- इमिडाक्लोप्रिड 70 डब्लूएएस की 10 ग्राम/किलो बीज की दर के साथ बीज उपचार या इमिडाक्लोप्रिड 17.8% एस एल 1.0 मि.ली./लीटर की दर के साथ 30 मिनट के लिए नर्सरी के पौध की जड़ों को डुबोकर उपचारित करने के उपरांत पौध रोपण करें।
- कीटनाशकों की दीर्घकालिक प्रभावकारिता को बनाए रखने के लिये एक ही क्रिया प्रणाली वाले रासायनिक कीटनाशकों के बार-बार छिड़काव से बचें।
- शरणार्थी कीटों के संरक्षण के लिये रोपाई की गयी मिर्च की फसलों में पांच प्रतिशत रिक्त जगहों पर किसी भी प्रकार के कीट रसायनों का प्रयोग ना करें। इसके अलावा मिर्च की फसलों के कुछ भागों में ही कीट मौजूद हैं, तो सम्पूर्ण खेत में छिड़काव नहीं किया जाना चाहिए।
- कीटनाशकों को सुरक्षित, अधिक प्रभावी या उपयोग में अधिक सुविधाजनक बनाने के लिए सहायक (एडजुवेंट्स) और योजक(एडिटिव्स) को मिलाया जा सकता है।
- बरसात के दिनों में कीटनाशकों की प्रभावशीलता बढ़ाने के लिए कीटनाशकों के घोल में स्टीकर जैसे सैन्डोविट 0.5 मि.ली./लीटर कीटनाशक के घोल में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए, स्टीकर के प्रयोग से कीटनाशक की प्रभावशीलता बढ़ जाती है। ■

ब्लैक थ्रिप्स का मिर्च के फूल पर संक्रमण

संतरे में लोरैंथस परजीवी खरपतवार

नताशा गुरुंग[1], साजिद अली[2], सुजीत सरकार[3], बिजॉय सिंह[4] और चंदन कुमार[5]

उत्तर बंगाल क्षेत्र दार्जिलिंग संतरे की विभिन्न प्रजातियों के विकास के लिए अनुकूल जलवायु से संपन्न है। भारत के उत्तर-पूर्वी क्षेत्र की जलवायु को संतरा उत्पादन का केन्द्र माना जाता है। दार्जिलिंग संतरा मुख्य रूप से पश्चिम बंगाल, असोम, त्रिपुरा, मणिपुर, मिजोरम, अरुणाचल प्रदेश आदि राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों की आजीविका का एक मुख्य स्त्रोत है। इस विशेष प्रकार की प्रजाति के खराब उत्पादन का मुख्य कारण संतरा वर्गीय तनाछेदक, लोरैंथस तना परजीवी खरपतवार, गैरवैज्ञानिक खेती, गुणवत्ता रोपण सामग्री की कमी है। पश्चिम बंगाल के कालिम्पोंग जिले में दार्जिलिंग संतरा प्रजाति लोरैंथस खरपतवार से अत्यधिक प्रभावित है, जो पौधों के विकास में कमी, उत्पादन में कमी, गुणवत्ता में कमी तथा पौधों पर इस प्रकार हावी हो जाता है कि संक्रमण के कुछ ही वर्ष बाद मेजबान पौधों की मृत्यु हो जाती है। लोरैंथस खरपतवार बगीचे के अलावा अन्य फलों के पेड़-पोधौं जैसे-आम, आड़ू, नीम, सेब तथा चाय बागानों आदि पर भी अपना पोषण करता है। यह खरपतवार उत्तर-पूर्वी क्षेत्र के संतरा उत्पादन में कमी का प्रमुख कारण है।

दार्जिलिंग संतरा (*सिट्रस रेटिकुलाटा ब्लैंको*) उत्तर पश्चिम बंगाल की महत्वपूर्ण नकदी फसल में से एक है। इसका उत्पादन दिन-प्रतिदिन कुछ महत्वपूर्ण कारकों के कारण घट रहा है, जिसमें से एक प्रमुख कारक लोरैंथस परजीवी खरपतवार का बढ़ता प्रकोप है। यह खरपतवार समुद्र तल से 500 से 1800 मीटर तक के फल उगाने वाले क्षेत्रों में पाया जाता है। यह एक तना परजीवी खरपतवार है जो अप्रैल-मई के महीनों में उगता है, इसके प्रसार के लिए पक्षियों को जिम्मेदार माना गया है। इस खरपतवार के फैलाव का मुख्य कारण बगीचों तथा उसके आसपास की जगहों को साफ-सुथरा नहीं रखना है। इसका फैलाव पौधों से बगीचे में बहुत कम समय में ही हो जाता है। यह खरपतवार यहाँ के वातावरण में संतरे के तने के ऊपर आसानी से उग जाता है तथा इसके पोषक तत्वों से ही अपना पोषण करता है। इसके कारण फल वृद्धि, उत्पादन तथा गुणवत्ता के साथ-साथ जीवन भी बहुत जल्दी ही समाप्त हो जाता है। इस लेख के माध्यम से लोरैंथस खरपतवार के उत्पन्न का कारण, प्रभाव, नियंत्रण और

[1,3,4,5]भाकृअनुप-भा.कृ.अनु.सं. क्षेत्रीय केन्द्र कलिम्पोंग, पश्चिम बंगाल-734301; [2]क्षेत्रीय अनुसंधान केंद्र (पहाड़ी क्षेत्र), यूबीकेबी कलिम्पोंग-734301

गैर-रासायनिक प्रबंधन

- प्रभावित शाखाओं की छंटाई सावधानीपूर्वक करनी चाहिए ताकि इस खरपतवार का संक्रमण दूसरे वृक्ष में न हो।
- अत्यधिक संक्रमित वृक्षों से लोरैंथस खरपतवार हटाते समय आमतौर पर छंटाई के बाद पहले वर्ष में पेड़ फल नहीं देता है, लेकिन उसके अगले वर्ष कुछ मात्रा में फल देता है। यदि पौधों द्वारा फल नहीं दिया जाता है तो पुनः फिर से खरपतवार को अच्छे से देखकर हटाने की जरूरत है।
- लोरैंथस खरपतवार हटाने के बाद सिंचाई, जैविक खाद तथा पोषक-तत्वों की कमी को पूरा करके भी हम पेड़-पौधों को फिर से पुनःजीवित कर सकते हैं।
- बगीचे के आसपास हम निरंतर साफ-सफाई रखकर भी लोरैंथस खरपतवार से पेड़-पौधों का बचाव कर सकते हैं।

लोरैंथस का हौस्टोरिया

परजीवी का शाखा पर जीवनयापन

उचित नीति जरूरी

लोरैंथस परजीवी खरपतवार का प्रकोप दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। यह उत्तर-पूर्वी जलवायु में उत्पादित होने वाली संतरा प्रजाति के लिए चिंता का विषय है। इस खरपतवार का प्रभाव इस प्रकार बढ़ रहा है कि यह दार्जिलिंग संतरा प्रजाति के साथ-साथ अन्य वृक्षों को भी अपना शिकार बना रहा है। इसके कारण दार्जिलिंग संतरा के उत्पादन, गुणवत्ता तथा बागानों के फल उत्पादन में काफी कमी दर्ज की गयी है। इसके कारण यहाँ के किसानों को आर्थिक रूप से काफी नुकसान हो रहा है। इस क्षेत्र में रहने वाले काफी लोगों का मुख्य व्यवसाय दार्जिलिंग संतरे का उत्पादन है जो लोरैंथस खरपतवार के कारण प्रभावित हो रहा है। कृषि व्यवसाय से संबंधित लोग, केन्द्र और राज्य स्तर के अनुसंधान संस्थानों को इससे निजात पाने के लिए विशेष रूप से सजग होने तथा रोकने के लिए हर संभव प्रयास करना होगा ताकि आर्थिक रूप से मजबूत होने के लिए दार्जिलिंग संतरा प्रजाति को व्यवसाय का मुख्य आधार बनाया जा सके। इस खरपतवार को पूरी तरह से खत्म करने और इसे आसपास के बगीचों में फैलने से रोकने के लिए संबंधित विभागों द्वारा अनुसंधान संस्थानों के साथ मिलकर नियोजित प्रशिक्षण और प्रबंधन कार्यक्रम शुरू किए जाना अति आवश्यक है। इस खरपतवार के लिए निम्न स्तर से उच्च स्तर तक यदि लोगों द्वारा ठोस कदम नहीं उठाए गए तो दार्जिलिंग संतरा प्रजाति के साथ-साथ इससे संक्रमित अन्य फलों की प्रजाति के अस्तित्व को बहुत जल्द ही खो देगें।

संतरे के पेड़ पर लोरैंथस परजीवी का प्रकोप

रासायनिक प्रबंधन

- पेड़ की संक्रमित शाखाओं की छंटाई कर कटे भाग पर बोर्डो पेस्ट (कॉपर सल्फेट ($CuSO_4$) और कैल्शियम हाइड्रॉक्साइड ($Ca(OH)_2$) का उपयोग कर पेड़ से इस खरपतवार को दूर कर सकते हैं।
- मेजबान पौधे में कॉपर सल्फेट ($CuSO_4$) और फेरोक्सोन के इंजेक्शन द्वारा भी नियंत्रित किया जा सकता हैं।
- कीट से संक्रमित शाखाओं की त्वचा 0.5 सें.मी. गहराई तक हटाने के बाद उस पर अच्छी तरह साफ करके *2,4-डाइक्लोरोफेनोक्सीएसिटिक एसिड* का उपयोग कर भी पेड़-पौधों को बचाया जा सकता है।

प्रबंधन की जानकारी दी गई है। इससे काफी हद तक संक्रमित पेड़-पौधों को आसानी से बचाया जा सकता है।

इस खरपतवार के फैलाव का मुख्य कारण दो पक्षी प्लेन फ्लावर पेकर और फॉयर-ब्रेस्टेड फ्लावर पेकर हैं। पक्षियों द्वारा फल को खाकर पेड़-पौधों पर फेंक देना या उसके साथ किसी तरह से इस बीज का संपर्क पेड़-पौधों के तनों से होना आदि प्रमुख कारणों में हैं। इस खरपतवार के जीवनचक्र में सबसे पहले बीज का अंकुरण होता है उसके बाद परजीवी *हौस्टोरियम* (एक लगाव तंत्र) को अपने मेजबान की शाखाओं में शामिल कर लेते हैं। बाद में, जहाँ भी मेजबान के साथ संपर्क होता है, उसी परजीवी पौधे से द्वितीयक *हौस्टोरिया* का निर्माण होता है। शाखाओं पर परजीवीकरण करके पूरे पौधे पर अपना जाल बिछा देता है। यह पौधे के सभी पोषक तत्वों को आसानी से अपने आहार के रूप में लेता है। इसके कारण सूर्य का प्रकाश पेड़-पौधों पर नही पड़ता है और पौधा पोषण रहित होकर ग्रसित हो जाता है।

आकृति और रंगरूप

पत्तियाँ गोलाकार और नीचे की तरफ सफेद होने के कारण सिल्वर ग्रे रंग की दिखती हैं। लोरैंथस खरपतवार में जुलाई से अगस्त के बीच फूल आते हैं। फूलों का आकार 3 सें.मी. लंबा, घुमावदार, आधार पर लाल और सिरे के पास हरे पीले रंग के होते हैं। इसके फल आकार में जामुन की तरह छोटे (6-7 मि.मी.) लंबे, पकने पर लाल और अत्यधिक चिपचिपे गूदे वाले होते हैं। यह खरपतवार देखने में जितना सुंदर होता है उतना ही मेजबान पेड़ के लिए अभिशाप का काम करता है। ■

मार्च-अप्रैल के मुख्य बागवानी कार्य

हरे कृष्ण[1], **अरविंद कुमार सिंह**[2], **नृपेन्द्र विक्रम सिंह**[3], **कुलदीप श्रीवास्तव**[1]
और **शुभम कुमार तिवारी**[1]

वसंत सुंदरतम ऋतु है, जो प्रकृति को नवजीवन प्रदान करती है। यह शीत ऋतु के अंत और ग्रीष्म ऋतु के आगमन का संकेतक है। इस दौरान फूलों के खिलने, आम के वृक्षों के बौरों से लदने और शीतल मलय समीर के बहने से वातावरण अत्यंत सुखद हो जाता है। स्वच्छ आकाश और चारों ओर फैली हरियाली इसे और भी मनमोहक बनाती है, इसलिए इसे ऋतुराज और कुसुमाकर भी कहा जाता है। इस ऋतु में बसंत पंचमी, महाशिवरात्रि, होली जैसे प्रमुख त्योहार मनाए जाते हैं। नवोद्भिद पत्तियों और पुष्पों से आच्छादित वृक्षों की प्रचुरता इसे प्रेम, पुनर्जन्म और नए आरंभ का प्रतीक बनाती है। नव कलिकाओं के प्रस्फुटन से प्रतीत होता है कि प्रकृति नवसृजन हेतु स्वयं का श्रृंगार कर रही हो। भारत में वसंत फरवरी-मार्च से मार्च-अप्रैल तक की द्विमासिक ऋतु है, जो भारतीय कैलेंडर में चैत्र और बैसाख के महीनों में आती है। इस दौरान, 21 मार्च के आसपास दिन और रात बराबर होते हैं, जिसे वसंत विषुव कहा जाता है, जिसके बाद दिन बड़े और रातें छोटी होने लगती हैं। अतः इस ऋतु का भौगोलिक, सांस्कृतिक और वैज्ञानिक महत्व है।

वसंत में नई कलिकाएँ प्रस्फुटित होती हैं, जबकि पुरानी पत्तियाँ झड़ चुकी होती हैं। इन नव कलिकाओं की वृद्धि के लिए पौधों को अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है, जो जड़ों में संचित शर्करा से प्राप्त होती है। फल वृक्षों में इस दौरान वानस्पतिक वृद्धि एवं पुष्पण की प्रक्रिया तीव्र होती है, जिससे बागवानी गतिविधियाँ भी बढ़ जाती हैं।

मार्च-अप्रैल की इस अवधि में सदाबहार फलों जैसे आम, अमरूद, लीची और नीबूवर्गीय फलों के नए बाग लगाए जा सकते हैं, जबकि समशीतोष्ण व उपोष्ण फलों में पुष्पण आरंभ हो जाता है। इस समय बागवानों को परागण प्रबंधन, संतुलित सिंचाई और फल लगने के तुरंत बाद जल प्रबंधन पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। तो आइए, फलन की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण इस ऋतुराज वसंत का स्वागत बागवानी क्रियाओं के माध्यम से करें।

आम

यह द्विमाही आम की अच्छी पैदावार के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि मार्च में पुष्पण के बाद फल बनना प्रारंभ हो जाते हैं। इस दौरान कीटनाशकों का प्रयोग न करें, क्योंकि इससे परागकण नष्ट हो सकते हैं और लाभकारी कीटों की मृत्यु हो सकती है। पुष्पण के समय सिंचाई से बचें, लेकिन फल लगने के तुरंत बाद उचित जल प्रबंधन सुनिश्चित करें। रोग एवं कीट नियंत्रण हेतु, चूर्णिल आसिता से बचाव के लिए बौर 8-10 सें.मी. लंबी होने पर आर्द्रशील गंधक (2 ग्राम/लीटर) का छिड़काव करें और 10-15 दिनों बाद डिनोकैप (1 मिली/लीटर) का उपयोग करें। श्याम व्रण रोग की स्थिति में कार्बेण्डाजिम (2 ग्राम/लीटर) या पत्तियों व शाखाओं के संक्रमण पर कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (3 ग्राम/लीटर) का छिड़काव करें। मिली बग से बचाव के लिए वृक्षों के तनों पर पॉलीथीन पट्टी बांधों और अंतर्प्रवाही कीटनाशकों (मैटासिस्टोक्स या रोगर) का प्रयोग करें। कीटजन्य कवक ब्यूवेरिया बैसियाना मिली बग की अपरिपक्व अवस्थाओं (निम्फ) के नियंत्रण में एक प्रभावी जैव-नियंत्रक पाया गया है।

फलों को फुदका या तेला से बचाने के लिए इमिडाक्लोप्रिड (0.3 मिली प्रति लीटर) या बुप्रोफेजीन (1-2 मिली/लीटर) का छिड़काव करें।

फल मक्खी के नियंत्रण हेतु प्रति एकड़ 6 मिथाइल यूजीनॉल प्लाईवुड प्रपंच (ट्रैप)

आम

[1]भाकृअनुप-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी-221005; [2]केंद्रीय बागवानी परीक्षण केंद्र, (केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान), वेजलपुर (गोधरा), गुजरात-389340; [3]फल एवं उद्यान प्रौद्योगिकी संभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

केला

स्थापित करें। वृक्षों के चारों ओर मिट्टी की नियमित जुताई करें। तुड़ाई से तीन सप्ताह पहले डेकामेथ्रिन 2.8 ईसी/0.5 मिली/लीटर + एजाडिरक्टिन (0.3 प्रतिशत) 2 मिली/लीटर का छिड़काव करें और फलों की समय पर तुड़ाई सुनिश्चित करें। यदि फल मक्खी का प्रकोप गंभीर हो (5 से अधिक प्रति निगरानी प्रपंच), तो साप्ताहिक अंतराल पर वृक्षों के तनों पर चारा (बेट) का छिड़काव करें। चारा (बेट) छिड़काव के लिए 100 ग्राम गुड़ को एक लीटर पानी में घोलकर उसमें 2 मिली डेल्टामेथ्रिन (2.8 ईसी) मिलाएं। तुड़ाई के बाद फलों को 48 डिग्री सेल्सियस पर 1 घंटे के लिए गर्म पानी में उपचारित करें।

तना छेदक व पत्ती काटने वाले कीटों के लिए लेम्डा साइहलोथ्रिन या एसीटामिप्रिड का छिड़काव करें। फल गिरने से रोकने हेतु प्लेनोफिक्स (4.5 मिली/गैलन) का तीन बार छिड़काव करें तथा निंबोली अवस्था में 2 प्रतिशत यूरिया या सूक्ष्म तत्वों का 10-12 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें। ऊतक क्षय रोग के लिए 0.8 प्रतिशत बोरेक्स और कोयलिया रोग से बचाव हेतु अप्रैल के अंत में 1 प्रतिशत बोरेक्स का छिड़काव करें। गुच्छा रोग से प्रभावित बौरों को काटकर नष्ट करें और दीमक के प्रकोप पर क्लोरोपायरीफॉस (2 मिली/लीटर) का छिड़काव करें।

नवरोपित पौधों की सिंचाई प्रति सप्ताह करें और गर्मी व लू से बचाव के लिए तीन ओर से छप्पर (पुआल) से ढकें, पूर्व दिशा खुली रखें। अप्रैल में फलों की वृद्धि तीव्र होती है, इसलिए सिंचाई का अंतराल 15 दिनों का रखें। खाद एवं उर्वरकों के तहत, एक वर्ष के पौधों के लिए 50 ग्राम नाइट्रोजन, 25 ग्राम फॉस्फेट, 50 ग्राम पोटाश तथा 10 वर्ष से अधिक आयु के वृक्षों के लिए 500 ग्राम नाइट्रोजन, 250 ग्राम फॉस्फेट और 500 ग्राम पोटाश प्रति वृक्ष दें।

केला

मार्च-अप्रैल में बढ़ते तापमान के कारण मिट्टी में नमी की कमी हो जाती है, जिससे केले की अच्छी गुणवत्ता वाली पैदावार के लिए उचित सिंचाई प्रबंधन आवश्यक हो जाता है। इस दौरान खेत में प्रत्येक 5-6 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए। दक्षिण भारत के कुछ क्षेत्रों, जैसे कावेरी नदी के किनारे, मार्च में (रोबस्टा, ड्वार्फ कैवेंडिश, ने पूवान) और पालिनी की निचली पहाड़ियों में अप्रैल में (वान, रास्थली, कारपुरावल्ली) केले की रोपाई के लिए उपयुक्त समय होता है।

फसल की बेहतर वृद्धि और रोगों से बचाव के लिए सूखी और रोगग्रस्त पत्तियों को समय-समय पर हटाना चाहिए, जिससे प्रकाश और हवा पौधों के निचले हिस्सों तक पहुँच सके, और कीटों व रोगों की आशंका कम हो। अधिकतम उपज प्राप्त करने के लिए कम से कम 13-15 स्वस्थ पत्तियों का बने रहना आवश्यक है। यदि पत्तियों में किसी सूक्ष्म पोषक तत्व की कमी दिखाई दे, तो तुरंत आवश्यक पोषक तत्वों का छिड़काव करना चाहिए।

पेड़ी फसल के रूप में उगाए गए केले में आभासी तना (स्यूडोस्टेम) बेधक कीट का प्रकोप देखने को मिलता है। इससे प्रभावित पौधे के आभासी तने को आधार से काटकर 100 मिलीलीटर 'ब्यूवेरिया बैसियाना' (3 मिली प्रति लीटर) या क्लोरोपायरीफॉस (2.5 मिली प्रति लीटर) और स्टिकिंग एजेंट (1 मिली प्रति लीटर) के घोल से उपचारित करना चाहिए। इसके अलावा, इस कीट से बचाव के लिए पांच महीने पुराने केले के तनों पर क्लोरोपायरीफॉस (2.5 मिली प्रति लीटर + 1 मिली स्टिकिंग एजेंट) या 1 प्रतिशत एजेडिरैक्टिन (2.5 मिली प्रति लीटर) को रगड़कर लगाया जा सकता है। गुच्छों की तुड़ाई के बाद, आभासी तनों को 30 सें.मी. के टुकड़ों में काटकर कीट नियंत्रण के लिए जाल के रूप में उपयोग किया जा सकता है।

इस कीट के प्रकोप को कम करने के लिए केले के बाग में नियमित रूप से निराई-गुड़ाई करना आवश्यक है। मार्च के प्रारंभ से ही साप्ताहिक अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए। केले के बागों में प्रत्येक पौधे से 40-50 सें.मी. दूर गोलाई में नाइट्रोजन (25 ग्राम, यानी 55 ग्राम यूरिया) डालकर हल्की गुड़ाई करें और फिर सिंचाई करें। पौधे के आधार से निकलने वाली सभी पत्तियों को हटा दें, केवल एक तलवारी पत्ती (भूस्तारी) को छोड़ दें, क्योंकि यह नए पौधों के विकास के लिए उपयुक्त होती है। इसके अतिरिक्त, 60 ग्राम नाइट्रोजन को 10 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। बागों में निराई-गुड़ाई और सफाई नियमित रूप से करें ताकि फसल स्वस्थ बनी रहे।

अमरूद

जिन क्षेत्रों में सिंचाई की सुविधा उपलब्ध है, वहाँ मार्च माह में भी पौधों की रोपाई की जा सकती है। खेत की तैयारी के बाद, निर्धारित दूरी पर 60×60×60 सें.मी. आकार के गड्ढे तैयार करें। प्रत्येक गड्ढे में 25-30 किलोग्राम सड़ी हुई गोबर खाद, 500 ग्राम सुपर फॉस्फेट और 500-1000 ग्राम नीम की खली मिलाकर पौधरोपण से 15-20 दिन पहले भरें।

रोपण से पूर्व गड्ढों की हल्की सिंचाई करें, फिर पौधे की जड़ के अनुसार गड्ढा खोदकर बीच में रोपाई करें और चारों ओर मिट्टी को दबाकर हल्की सिंचाई करें। पौधे लगाने की दूरी मिट्टी की उर्वरता, किस्म और जलवायु पर निर्भर करती है। सघन बागवानी तकनीक अपनाकर प्रति हैक्टर 500 से 5000 पौधे तक लगाए जा सकते हैं।

मार्च में वृक्षों के नीचे की मिट्टी की जुताई करें, जिससे कीटों के प्यूपा नष्ट हो जाएँ। यह समय पुराने लेकिन अनुत्पादक वृक्षों के पुनर्जीवन के लिए भी उपयुक्त है। इसके लिए वृक्षों को भूमि से 75 सें.मी. ऊँचाई तक शिरोच्छेदन करें या द्वितीयक शाखाओं को उनके उत्पत्ति बिंदु से 75 सें.मी. की दूरी

अमरूद मे पुष्पण

तक काटें। बीते मौसम में विकसित हुई अंतस्थ शाखाओं को 10-15 सें.मी. तक छांटें।

अमरूद की फसल वर्षा और जाड़े के मौसम में आती है। यदि केवल एक फसल लेनी हो, तो वर्षा फसल को छोड़ देना उचित होता है। प्रति पौधा 50 किग्रा गोबर खाद, 0.5 किग्रा यूरिया, 1.25 किग्रा सुपर फॉस्फेट और 750 ग्राम पोटाश दें। वर्षा फसल रोकने हेतु मई तक सिंचाई बंद कर दें। नेफ्थेलीन एसिटिक एसिड 800 पीपीएम (8 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी) का 15 दिनों के अंतराल पर दो बार छिड़काव करें (पहला छिड़काव 50 प्रतिशत पुष्प खुलने पर और दूसरा 20 दिनों बाद)। वैकल्पिक रूप से, हाथ से फूलों को तोड़कर भी हटाया जा सकता है। नई वृद्धि को केवल दो पत्तियों तक काटने से वर्षा फसल को रोका जा सकता है।

रोग व कीट नियंत्रण

उकठा रोग के नियंत्रण हेतु प्रत्येक पौधे की जड़ों में 20-30 ग्राम बाविस्टीन को 10-15 लीटर पानी में घोलकर प्रयोग करें। एंथ्राक्नोज (श्याम व्रण) रोग के प्रभाव से फल गिरने लगते हैं। रोकथाम के लिए 0.25 प्रतिशत ब्लाइटॉक्स घोल (250 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी) का छिड़काव करें। मिली बग के नियंत्रण हेतु क्लोरोपायरीफॉस (2.5 मिली प्रति लीटर) का छिड़काव करें व फल मक्खी से बचाव के लिए मिथाइल यूजीनॉल (0.1 प्रतिशत) युक्त प्रपंच (ट्रैप) का उपयोग करें। बोरॉन की कमी से पत्तियों के छोटे होने, फलों के कठोर और फटने की समस्या होने पर 0.3 प्रतिशत बोरेक्स का पर्णीय छिड़काव करें। इसी प्रकार जिंक की कमी से पत्तियां छोटी व पीली दिखाई देने पर 0.5 किग्रा जिंक सल्फेट और 0.5 किग्रा चूना 100 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। नई पत्तियों के आने पर 15 दिनों के अंतराल पर 2-3 बार छिड़काव करें।

नीबूवर्गीय फल

किन्नू

यदि फरवरी में नीबूवर्गीय फलों को उर्वरक न दिया गया हो, तो इस द्विमाही में अवश्य दें। उर्वरक को पौधों से कम से कम 6 इंच की दूरी पर डालें और तत्पश्चात सिंचाई करें। वृक्षों में सूक्ष्म पोषक तत्वों की पूर्ति के लिए अर्का सिट्रस स्पेशल (5 ग्राम प्रति लीटर) का दो बार छिड़काव करें। पहला पुष्पण से पहले और दूसरा पुष्पण के बाद। वैकल्पिक रूप से, 5 ग्राम जिंक सल्फेट, 2 ग्राम फेरस सल्फेट, 2 ग्राम मैंग्नीज सल्फेट, 2 ग्राम मैग्नीशियम सल्फेट, 1 ग्राम बोरेक्स, 6 ग्राम चूना, 10 ग्राम यूरिया को 1 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। अप्रैल में पौधों के थालों में नमी संरक्षण के लिए पलवार बिछाएँ। पौधशाला में पौधों की नियमित सिंचाई, गुड़ाई और निराई करें। बाग में 15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई सुनिश्चित करें। गर्मियों में बढ़ते तापमान के कारण फलों की वृद्धि बाधित हो सकती है और फल गिरने की समस्या उत्पन्न हो सकती है। इसे रोकने के लिए 2,4-डी (10 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी) का छिड़काव करें। फलों को फटने से बचाने के लिए 100 मिलीग्राम जिब्रेलिक एसिड को 10 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

अंगूर

उष्णकटिबंधीय जलवायु वाले क्षेत्रों (महाराष्ट्र, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु) में अप्रैल माह के दौरान आधारिक छंटाई (प्रूनिंग) करें। अंगूर के फल हर मौसम में नई शाखाओं पर विकसित होते हैं, इसलिए पिछले वर्ष की टहनियों को निश्चित लंबाई तक छांटना आवश्यक है। छंटाई की तीव्रता किस्म की बढ़वार क्षमता पर निर्भर करती है, जैसे ब्यूटी सीडलेस पर 2-3 कलिकाएँ, परलेट पर 3-4, पूसा उर्वशी व पूसा नवरंग पर 4-6, तथा पूसा सीडलेस, किशमिश चार्म व थॉमसन सीडलेस पर 9-12 कलिकाएँ छंटाई पश्चात

अंगूर में कायिक वृद्धि

छोड़ देनी चाहिए। छंटाई के बाद मुख्य शाखा से अनावश्यक पत्तियाँ हटाएं और बेलों को जाल पर व्यवस्थित करें, जिससे कलिकाओं का प्रस्फुटन शीघ्र और समान रूप से हो सके।

उत्तर भारत में, एक अंगूर के गुच्छे में 100-120 दाने आदर्श माने जाते हैं, इसलिए अतिरिक्त दानों की छंटाई आवश्यक होती है। फलों के वांछित आकार और भार को बढ़ाने के लिए, जब 50 प्रतिशत से अधिक फूल खिल चुके हों, तब 30-40 मिलीग्राम जिब्रेलिक एसिड प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। जब फलों का आकार 3-4 मिमी हो जाए, तो थिनिंग (वलयन) की प्रक्रिया शुरू करें। नई बेलों की सिंचाई हर 10-15 दिनों के अंतराल पर करें।

यदि एन्थ्राक्नोज (श्यामव्रण) रोग का प्रकोप हो, तो बाविस्टिन (0.2 प्रतिशत) या ब्लाइटॉक्स (3 ग्राम प्रति लीटर पानी) का छिड़काव एक सप्ताह के अंतराल पर दो बार करें। चूर्णिल फफूंद की रोकथाम के लिए केराथेन (0.1 प्रतिशत) के घोल का छिड़काव करें या सल्फर की धूल का उपयोग करें। थ्रिप्स की समस्या को नियंत्रित करने के लिए, इमिडाक्लोप्रिड (100 मि.ली. प्रति 300 लीटर पानी) का छिड़काव करें।

अंगूर की पोषण आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए एक वर्ष के पौधे को 50 ग्राम नाइट्रोजन व 40 ग्राम पोटाश दें। पौधे की उम्र बढ़ने के साथ, यह मात्रा क्रमशः बढ़ाकर 5 वर्ष या उससे अधिक आयु के पौधों के लिए 250 ग्राम नाइट्रोजन व 200 ग्राम पोटाश करें।

लीची

मार्च में लीची में फल लगना प्रारम्भ हो जाता है। इस माह 450-500 ग्राम यूरिया और 250-300 ग्राम पोटाश प्रति पौध देना चाहिए। उर्वरक देने के पश्चात सिंचाई सुनिश्चित करें। इसके अतिरिक्त, आवश्यकतानुसार 2 प्रतिशत यूरिया के दो छिड़काव फल की वृद्धि के दौरान उनके आकार वृद्धि के लिए दिये जा सकते हैं। फलों को गिरने से बचाने के लिए मार्च माह में ही प्लेनोफिक्स (2 मिली प्रति 5 लीटर) अथवा एनएए (200 मिग्रा प्रति लीटर) के घोल का छिड़काव करें। चूर्णिल आसिता रोग के प्रकोप से बचने के लिए लीची में संस्तुत रसायनों का प्रयोग करें। लीची के नवरोपित बागों की सिंचाई करें। बागों की निराई-गुड़ाई एवं सफाई का कार्य करें।

फलों को फटने से बचाने हेतु अप्रैल माह में, बोरेक्स (4 ग्राम प्रति लीटर) का 15 दिन के अंतराल पर गुठली बनने के बाद छिड़काव करें। अप्रैल में पौधों की 15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए ताकि फलों में नियमित वृद्धि होती रहे। पौधों की नियमित सिंचाई करते रहना चाहिए। लीची में माइट के प्रकोप को कम करने हेतु डाइकोफॉल (18.5 ईसी 4 मिलीलीटर प्रति 5 लीटर पानी में) का छिड़काव लाभकारी रहता है। लीची के बागों की आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहें।

लीची में फल छेदक की रोकथाम हेतु फूलों के खिलने से पहले निंबीसिडीन 4 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। इसके अतिरिक्त, रासायनिक नियंत्रण हेतु, इमिडक्लोप्रिड 17.8 एसएल के 0.7-1.0 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी का पहला और दूसरा छिड़काव 12-15 दिन के अंतराल पर करें। पहला छिड़काव फलों के मटर के दाने की अवस्था पर करें।

तीसरा छिड़काव एमामेक्टिन बेंजोएट 5 प्रतिशत एसजी के 0.7 ग्राम प्रति लीटर अथवा लैम्डा साइहैलोथ्रिन 5 प्रतिशत ईसी के 0.7 मिलीलीटर प्रति 5 लीटर पानी में घोल बनाकर करें। मार्च से जून तक नवरोपित पौधों को अत्यधिक गर्मी से बचाने हेतु पुआल अथवा घास-फूस से बने छप्परों से ढक देना चाहिए। छप्पर का मुख पूर्व की तरफ खुला छोड़ दें।

अनार

मार्च माह में पौधों को लगाने के लिए 60×60×60 सें.मी. आकार के गड्ढे पौध-रोपण के एक महीने पूर्व खोदें। तत्पश्चात, गड्ढे की ऊपरी मिट्टी में 20 किग्रा. सड़ी हुई गोबर की खाद, 1 किग्रा. सिंगल सुपर फॉस्फेट, 50 ग्राम क्लोरोपायरीफॉस चूर्ण मिट्टी में मिलाकर गड्ढों को सतह से 15 सें.मी. ऊंचाई तक भर दें। गड्ढे भरने के बाद सिंचाई करें ताकि मिट्टी अच्छी तरह से बैठ जाए। इसके बाद ही पौधों का रोपण करें। पौध रोपण की दूरी समान्यतया 5×5 या 6×6 मीटर एवं सघन विधि में 5×3 मीटर होती है। सघन विधि से बाग लगाने पर पैदावार डेढ़ गुना तक बढ़ सकती है। इसमें लगभग 600 पौधे प्रति हैक्टर लगाये जा सकते हैं।

अनार

पपीता

मार्च-अप्रैल में पपीते की नर्सरी तैयार करने का कार्य पूरा कर लेना चाहिए ताकि जून-जुलाई में रोपाई के लिए स्वस्थ पौधे उपलब्ध हो सकें। एक हैक्टर क्षेत्र के लिए लगभग 250 ग्राम बीज पर्याप्त होता है। पौधों को 20×15 सें.मी. आकार के 150-200 गेज पॉलीबैग में मिट्टी, बालू और गोबर की खाद (1:1:1) के मिश्रण में तैयार किया जा सकता है। अत्यधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में रोपाई का कार्य मार्च माह में किया जा सकता है। गड्ढे भरते समय यह सुनिश्चित करें कि पानी पौधों के चारों ओर जमा न हो। नर्सरी में आर्द्र गलन एक गंभीर समस्या है। इसके नियंत्रण के लिए मेटालैक्सिल और मैंकोजेब (2 ग्राम प्रति लीटर पानी) का उपचार करें। बाग में 15 दिनों के अंतराल पर नियमित सिंचाई करें, विशेष रूप से नवरोपित पौधों की सिंचाई पर ध्यान दें। इसके अलावा, बाग की निराई-गुड़ाई और सफाई का कार्य नियमित रूप से करें।

चीकू

मार्च माह में पौधों की सिंचाई 8-10 दिनों के अंतराल पर नियमित रूप से करें। मिट्टी की नमी बनाए रखने और खरपतवार की वृद्धि को नियंत्रित करने के लिए प्रत्येक वृक्ष के थालों में सूखी पत्तियां, घास या धान के पुआल से भरी टोकरी फैलाएं। अप्रैल में सिंचाई का अंतराल 5-7 दिन करें या ड्रिप प्रणाली के माध्यम से नियमित जल आपूर्ति सुनिश्चित करें। मिट्टी को भुरभुरी और स्वस्थ बनाए रखने के लिए निराई-गुड़ाई करें तथा पलवार (मल्च) बिछाने का कार्य करें।

अप्रैल माह में तेलिया व्याधि से संक्रमित क्षेत्रों में 0.5 ग्राम स्ट्रेप्टोसायक्लिन + 2.5 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड प्रति लीटर का छिड़काव करें। रोग-रहित क्षेत्रों में केवल 2.5 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड प्रति लीटर का ही छिड़काव करें।

हस्त बहार के फलों की तुड़ाई भी मार्च से अप्रैल माह के दौरान की जाती है। नए बागों में प्रति वर्ष 50 ग्राम यूरिया दो बराबर भागों में डालें। पहली खुराक मार्च महीने में और दूसरी खुराक अप्रैल महीने में दी जाती है। 5 वर्षों के बाद प्रति पौधे 250 ग्राम यूरिया डालना शुरू करें।

अनार में फूल आने के तीन मौसम होते हैं, जैसे फरवरी-मार्च (अम्बे बहार), जुलाई-अगस्त (मृग बहार) और सितंबर-अक्टूबर (हस्त बहार)। अम्बे बहार के फल को सुनिश्चित सिंचाई की आवश्यकता होती है। मार्च-अप्रैल की द्विमाही में, थ्रिप्स का प्रकोप भी अधिक होता है, जिसके नियंत्रण के लिए नीले चिपचिपे जाल को 15-20 प्रति एकड़ की दर से लगाएं। इसके अतिरिक्त, थायमेथोक्साम 25 डब्ल्यूजी 0.5 ग्राम प्रति लीटर या एसिटामिप्रिड 20 एसपी 0.3 ग्राम प्रति लीटर का नई पत्ती निकलने और फल बनने की अवस्था में छिड़काव करें।

जब संक्रमण कम से मध्यम हो तो नीम के गिरी सत्त 5 प्रतिशत या एजाडिरेक्टिन का छिड़काव 3 मिली प्रति लीटर की दर से करें। कीटरोगजनक जैसे *वर्टिसिलियम लेकानी* 2 ग्राम प्रति लीटर या *मेटारिज़ियम एनिसोप्लिए* प्रति 5 ग्राम प्रति लीटर भी थ्रिप्स के विरुद्ध प्रभावी हैं। साथ ही, वैकल्पिक पोषिता फसलों जैसे मिर्च, प्याज, बैंगन आदि की अंतरवर्ती खेती से बचें।

बेर

मार्च में अधिकांश बेर की किस्में पकने लगती हैं, इसलिए फसल की तुड़ाई कर उचित बिक्री की व्यवस्था करें। तुड़ाई प्रायः हाथ से की जाती है, क्योंकि डंडे आदि के उपयोग से फलों को नुकसान पहुंच सकता है। तुड़ाई सुबह के समय करना अधिक उपयुक्त होता है। फलों को आकार के अनुसार बड़े, मध्यम और छोटे समूहों में वर्गीकृत करें तथा गुणवत्ता के आधार पर 'ए', 'बी' और 'सी' ग्रेड में श्रेणीकृत करें।

'ए' वर्ग में चमकदार पीले, बड़े एवं मध्यम आकार, एकरूप आकृति तथा बिना किसी विकृति या धब्बे-रहित फलों का चयन किया जाना चाहिए। इसी प्रकार 'बी' वर्ग के लिए अनियमित पीले या पीले-लाल, बड़े एवं मध्यम आकार, एकरूप आकृति तथा थोड़े विकृति या धब्बे-युक्त एवं 'सी' वर्ग के लिए लाल, अनियमित पीले, मध्यम और छोटे आकार के अधिकांशतः विकृति या धब्बे-युक्त फलों का चयन करना चाहिए।

छंटाई के बाद फलों को कपड़े की चादरों, जूट के बोरों, नायलॉन के जालीदार थैलों, बांस की टोकरियों या लकड़ी/गत्ते के डिब्बों में पैक कर बाजार भेजें। तुड़ाई के तुरंत बाद फलों को 10 डिग्री सेल्सियस

अलूचा

मार्च में पुष्पण के दौरान अलूचे के बाग में परागण को बढ़ावा देने के लिए प्रति हैक्टर 4-5 मधुमक्खी के छत्ते रखें। इस समय किसी भी प्रकार के कीटनाशकों का उपयोग न करें, क्योंकि इससे परागण करने वाले कीट नष्ट हो सकते हैं, जिससे फलन प्रभावित होगा। पुष्पण के दौरान सिंचाई से बचना चाहिए, जबकि फल लगने के तुरंत बाद सिंचाई की उचित व्यवस्था करनी आवश्यक है। ग्रीष्म ऋतु में खरपतवार का प्रकोप बढ़ जाता है, इसलिए समय-समय पर इन्हें निकालते रहें। अलूचे के वृक्षों के समुचित विकास के लिए सप्ताह में एक बार नियमित सिंचाई करें। जहां सिंचाई की सुविधा न हो, वहां वृक्षों के नीचे पलवार (मल्च) बिछाएं, जिससे खरपतवार की वृद्धि कम होगी, मिट्टी का तापमान नियंत्रित रहेगा और फलों की गुणवत्ता बेहतर होगी। अलूचे की कुछ किस्मों, जैसे ब्यूटी, सांता रोजा और मैथिली में अधिक फल लगते हैं। इससे शाखाएं फलों के भार से टूट सकती हैं। इस समस्या से बचाव के लिए शाखाओं को बांस या मजबूत लकड़ी का सहारा दें। जापानी अलूचा की अधिकांश किस्मों में भी अधिक फल लगते हैं, जिससे फलों का आकार छोटा रह सकता है। इसे रोकने के लिए अतिरिक्त फलों की छंटाई करें। यह प्रक्रिया हाथ से की जा सकती है या 50 पी.पी.एम. नेफ्थेलीन एसिटिक एसिड (50 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी) का छिड़काव किया जा सकता है। पौधों की वृद्धि के लिए नाइट्रोजन आवश्यक होता है, इसलिए 0.5 प्रतिशत यूरिया के घोल का पर्णीय छिड़काव फूलों की पंखुड़ियों के झड़ने से लेकर फलों के पकने के दो सप्ताह पहले तक करें। जिंक और आयरन की कमी होने पर 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट और फेरस सल्फेट के घोल का पर्णीय छिड़काव करें। फलों को चिड़ियों से बचाने के उपाय करें। यदि पत्ती खाने वाले कीटों का प्रकोप हो, तो एमामेक्टिन बेंजोएट 5 एसजी या स्पिनोसैड 45 एससी का 0.25 मिली प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

अलूचा

पर पूर्वशीतन (प्री कूलिंग) करने से उनकी भंडारण क्षमता बढ़ जाती है। अप्रैल के अंत तक अधिकांश पेड़ों की पत्तियां गिर जाती हैं, जिससे वे काट-छांट के लिए तैयार हो जाते हैं। इस समय सिंचाई बंद कर दें और वृक्षों के नीचे कचरा साफ कर दें।

खजूर

विभिन्न क्षेत्रों की जलवायु के अनुसार, खजूर में पुष्पण की प्रक्रिया फरवरी से अप्रैल तक चलती है। चूंकि खजूर में नर और मादा पुष्पक्रम अलग-अलग वृक्षों पर खिलते हैं, इसलिए मार्च से अप्रैल में कृत्रिम परागण करना आवश्यक होता है। सामान्यत: हाथ से परागण की क्रिया अपनाई जाती है। नर पुष्पक्रमों से परागकण एकत्रित करने के लिए, ताजे और पूरी तरह से खिले नर पुष्पक्रमों को अखबार पर झाड़कर एकत्रित किया जाता है। इसके बाद, इन्हें बारीक छलनी से छानकर, पहले छह घंटे सूर्य के प्रकाश में और फिर 18 घंटे छाया में सुखाया जाता है।

सुखाए गए परागकणों को शीशियों में भरकर सामान्य कमरे के तापमान पर 8 सप्ताह और रेफ्रिजरेटर में एक वर्ष तक सुरक्षित रखा जा सकता है। कृत्रिम परागण के लिए, परागकणों को रुई के फाहे से मादा पुष्पक्रमों पर सुबह के समय, फूलों के खिलने के तुरंत बाद छिड़ककर किया जाता है। मादा पुष्पक्रमों को इस प्रकार दो-तीन दिन तक लगातार परागित किया जाता है। एक अन्य विधि में, नर पुष्पक्रमों की लड़ी को काटकर, खुले मादा पुष्पक्रमों के बीच उलटकर हल्के से बांध दिया जाता है, ताकि परागकण धीरे-धीरे मादा पुष्पों पर गिरते रहें। फलों के सेट होने के तुरंत बाद, सिंचाई की उचित व्यवस्था सुनिश्चित करें ताकि फलों की वृद्धि पर कोई प्रतिकूल प्रभाव न पड़े।

फालसा

मार्च माह में फालसा के नए बाग लगाए जा सकते हैं। पौधों को वर्गाकार विधि से 2.5-3.0 मीटर की दूरी पर रोपित किया जा सकता है। फालसा का पुष्पण फरवरी से शुरू होकर मई तक रहता है, इस दौरान फलों की उचित बढ़वार के लिए 15 दिनों के अंतराल पर नियमित सिंचाई करनी चाहिए। फालसा के फल अप्रैल के अंतिम सप्ताह में पकने लगते हैं। चूंकि फालसा के फल एक साथ नहीं पकते, इसलिए 1000 पीपीएम एथरेल का छिड़काव करके सभी फलों को समान परिपक्वता में लाया जा सकता है।

फालसा के फल अत्यधिक कोमल होते हैं, अत: इनकी तुड़ाई सुबह या शाम के समय करनी चाहिए, और तुड़ाई के तुरंत बाद फलों को बाजार में भेजने की समुचित व्यवस्था करनी चाहिए। फालसा का प्रचार बीज द्वारा भी किया जाता है, इसलिए ताजे और पके फलों से तुरंत निष्कर्षित बीजों का उपयोग बुआई के लिए करना चाहिए।

सेब

पुष्पण के बाद फल बनने की प्रक्रिया शुरू होती है। इस दौरान परागण को बढ़ावा देने के लिए बाग में प्रति हैक्टर 4-5 मधुमक्खी के छत्ते रखना आवश्यक है। कीटनाशकों का उपयोग न करें, क्योंकि इससे परागण करने वाले कीट नष्ट हो सकते हैं, जिससे फलन प्रभावित हो सकता है। पुष्पण के समय सिंचाई से बचना चाहिए, जबकि फल लगने के तुरंत बाद सिंचाई की समुचित व्यवस्था करनी आवश्यक है। इस समय फलों में कीट और रोगों की आशंका बढ़ जाती है। गर्मी से तनों की छाल को बचाने के लिए उन्हें घास से बांधना चाहिए। इस मौसम में अपस्थानिक शाखाएं अधिक निकलती हैं, जो पौधों के पोषक तत्वों का अत्यधिक उपयोग करती हैं। इन्हें जल्द से जल्द हटा देना चाहिए।

सेब

स्ट्रॉबेरी

पर्वतीय क्षेत्रों में किसान स्ट्रॉबेरी की खेती मुख्य रूप से नए पौध तैयार करने के लिए कर सकते हैं। इसलिए, यदि पौधों पर फूल आ रहे हों तो उन्हें तुरंत हटा देना चाहिए। हालांकि, मैदानी क्षेत्रों में ऐसा करने की आवश्यकता नहीं है। मैदानी भागों में मार्च के महीने में स्ट्रॉबेरी की फसल तैयार हो जाती है, जिसे तोड़कर 250 ग्राम के पन्नेट में पैक कर बाजार भेजने की उचित व्यवस्था करें।

मनोहारी स्ट्रॉबेरी

फलों के गिरने की समस्या को नियंत्रित करने के लिए, फल बनने के 4-5 सप्ताह बाद नेफ्थेलीन एसिटिक अम्ल का छिड़काव करें। चूर्णिल फफूंद के प्रकोप की स्थिति में 0.03 प्रतिशत केराथेन (300 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) या चूना-गंधक मिश्रण (1:40 अनुपात) का छिड़काव करें, जिससे रोग और कीट दोनों को नियंत्रित किया जा सकता है। यदि पौधों में जिंक की कमी हो, तो 0.1 प्रतिशत जिंक सल्फेट (1 कि.ग्रा. प्रति 100 लीटर पानी में) का छिड़काव करें। बोरॉन की कमी होने पर 0.5 प्रतिशत सुहागा (5 कि.ग्रा. प्रति 100 लीटर पानी में) के घोल का छिड़काव करें।

इस द्विमाही में अधिकांश फल वृक्षों में पुष्पण और फलन की प्रक्रिया शुरू हो जाती है, जिससे बसंत ऋतु बागवानी कार्यों की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। इस दौरान की गई लापरवाही का सीधा प्रभाव उत्पादन पर पड़ सकता है, इसलिए बागों में किए जाने वाले कृषि कार्यों को लेकर सतर्क रहें। आगामी द्विमाही में भी कुछ महत्वपूर्ण कृषि कार्य किए जाने होंगे, जिनकी विस्तृत जानकारी के लिए आपकी पत्रिका **'फल-फूल'** के अगले अंक को अवश्य पढ़ें। ■

ड्रैगन फ्रूट की खेती से समृद्धि

नवल किशोर गुप्ता

ड्रैगन फ्रूट मुख्य रूप से मैक्सिको में उत्पन्न फल प्रजाति है। इसे थाईलैंड, मलेशिया, वियतनाम और कंबोडिया जैसे दक्षिण-पूर्वी एशियाई देशों में बड़े पैमाने पर उगाया जाता है। यह एक उष्णकटिबंधीय सुपर फूड है जो पोषक तत्वों से भरपूर है। इसमें कैलोरी की मात्रा कम होती है। इसमें विटामिन, खनिज आहार, फाइबर और एंटीऑक्सीडेंट होते हैं। ड्रैगन फ्रूट वजन और रक्त शर्करा को कम करने में मदद करता है। स्वास्थ्यवर्द्धक और निरंतर बढ़ती मांग के कारण इसके उत्पादन पर बागवानों का ध्यान आकर्षित हो रहा है। इस कड़ी में एक ऐसे ही प्रगतिशील किसान श्री राम कुमार यादव जी जिन्होंने वैज्ञानिक परामर्श द्वारा ड्रैगन फ्रूट के उत्पादन से अपने लिए सफलता का मार्ग प्रशस्त किया और बाकि किसानों के लिए प्रेरणा का स्त्रोत बनकर एक सफल किसान बन गए हैं।

वर्तमान में ड्रैगन फ्रूट की खेती राजस्थान में भी लोकप्रिय होती जा रही है क्योंकि यह एक कठोर प्रजाति की फसल है। इसे अधिक देखभाल की आवश्यकता नहीं होती, कम उपजाऊ मिट्टी में भी इसे उगाया जा सकता है। इसे कम पानी की आवश्यकता होती है। इसका पौधा दूसरे या तीसरे वर्ष में ही प्रति पौधा 20-25 किलोग्राम फल देना शुरू कर देता है।

ड्रैगन फ्रूट की इन विशेषताओं और बाजार में उच्च मूल्य के कारण श्री राम कुमार यादव जो दादर ग्राम, जिला जयपुर के मूल निवासी हैं, ड्रैगन फ्रूट की खेती की ओर आकर्षित हुए। उत्पादन की संपूर्ण जानकारी हेतु इनके द्वारा कृषि विज्ञान केन्द्र, चौमूं पर संपर्क किया गया। ड्रैगन फ्रूट की खेती में अत्यधिक रूचि के कारण मार्च-2022 में कृषि विज्ञान केन्द्र ने विषय विशेषज्ञों की सहायता से ड्रैगन फ्रूट की उन्नत खेती विषय पर एक प्रशिक्षण कार्यक्रम श्री राम कुमार यादव के खेत पर आयोजित किया। इसमें 15 इच्छुक कृषकों/व्यक्तियों ने भाग लेकर प्रशिक्षण प्राप्त किया।

प्रशिक्षण कार्यक्रम को पूर्ण करने के पश्चात् श्री राम कुमार यादव ने अपने खेत पर 0.4 हैक्टर क्षेत्र में 330 सीमेंटेड पोल्स के साथ ड्रैगन फ्रूट की एक इकाई स्थापित की। इसमें 1320 ड्रैगन फ्रूट की एलिस रेड किस्म के पौधे लगाये गये जो गुजरात नर्सरी से मंगवाए गये। उक्त ड्रैगन फ्रूट की पूरी इकाई को वैज्ञानिक तरीके से बूंद-बूंद सिंचाई पद्धति के साथ, समय पर छंटाई संचालन, पोषक तत्वों का उचित प्रबंधन और केवीके वैज्ञानिकों के नियमित मार्गदर्शन के साथ रोग नियंत्रण उपायों का उपयोग करके स्थापित किया गया। ड्रैगन फ्रूट के पौधों की इकाई की स्थापना में श्री राम कुमार यादव द्वारा लगभग 3,00,000/- रुपये (तीन लाख रुपये) का निवेश किया गया।

इसके पश्चात् इस वर्ष जुलाई-2024 से श्री राम कुमार यादव द्वारा फल उत्पादन लेना आरम्भ किया गया जिसमें वे प्रत्येक पौधे से 10-12 फल प्राप्त कर रहे हैं। प्रत्येक फल को वह बाजार में अथवा अपने खेत पर प्रति फल लगभग 60-70 रुपये की कीमत पर बेच रहे हैं। पिछले माह तक लगभग उन्होंने 1,80,000/- रुपये (एक लाख अस्सी हजार रुपये) की आय प्राप्त कर ली है और यह निरंतर बढ़ रही है और आगामी माह में भरपूर लाभ प्राप्त होने की भी पूरी संभावना है।

स्वस्थ उपज

नवाचार से उन्नति

श्री राम कुमार यादव को वर्ष 2024 में राजस्थान सरकार के कृषि विभाग द्वारा अच्छे नवीन नवाचार पद्धतियों के लिए 'जिला नवाचारी किसान' के रूप में चुना गया तथा उन्हें 25,000/- रुपये की राशि से पुरुस्कृत भी किया गया। क्षेत्र के आस-पास के कृषक श्री राम कुमार यादव का अनुसरण करते हुए ड्रैगन फ्रूट की खेती को अपनाकर अपनी आय का जरिया बना रहे है।

विषय वस्तु विशेषज्ञ (उद्यान) कृषि विज्ञान केन्द्र, चौमूं

ISSN 0971-2984 पंजी. सं. (क्यू)-437

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की लोकप्रिय मासिक हिंदी पत्रिका

खेती

- निरंतर 73 वर्षों से प्रकाशित आपकी अपनी लोकप्रिय हिंदी मासिक पत्रिका **खेती** में खेती-बाड़ी के आधुनिक तौर-तरीकों, पशुपालन की उन्नत विधियों, कृषि वानिकी, औषधीय पौधों की खेती तथा प्रगतिशील किसानों की सफलता गाथाओं से जुड़े अनुभवी कृषि वैज्ञानिकों के लेखों को अत्यंत सरल भाषा में प्रस्तुत किया जाता है। इस जानकारी का लाभ किसान भाई अपनी कृषि आय बढ़ाने के लिए उठा सकते हैं।
- संपूर्ण रंगीन पृष्ठों से सुसज्जित इस प्रतिष्ठित पत्रिका में **'अगले माह के कृषि कार्यकलाप'** तथा 'कृषि खबरें, देश विदेश की' जैसे अत्यंत उपयोगी नियमित स्तंभ भी हैं जो रोचक होने के साथ नई जानकारियां भी प्रदान करते हैं। यही नहीं विभिन्न किसानोपयोगी विषयों पर पत्रिका के विशेषांकों का भी समय-समय पर प्रकाशन किया जाता है।

पत्रिका मूल्यः

एक प्रति : 30 रुपये, वार्षिक सदस्यता शुल्क : 300 रुपये

संपर्क सूत्रः

प्रभारी, व्यवसाय एकक
कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन-1, पूसा गेट, नई दिल्ली-110012
दूरभाष : 011–25843657, ईमेल : bmicar@icar.org.in

डा. अनुराधा अग्रवाल, परियोजना निदेशक, कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय द्वारा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के लिए प्रकाशित तथा मैसर्स विबा प्रेस प्रा. लि., सी-66/3, ओखला इंडस्ट्रियल एरिया, फेस-II, नई दिल्ली 110 020 से मुद्रित। सम्पादकः सुनीता अरोड़ा